बुलबुल-सीरीज—संख्या ८

पौधों की दुनिया

लेखक—

श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा बी० ए०

मुद्रक—विश्वप्रकाश, कला प्रेस, प्रयाग

प्रकाशक—भीष्म एएड ब्रादर्स, पटकापुर, कानपुर।

पुस्तक मिलने का पता—

ज्ञान मन्दिर

C/O भीष्म एएड ब्रादर्स

पटकापुर, कानपुर
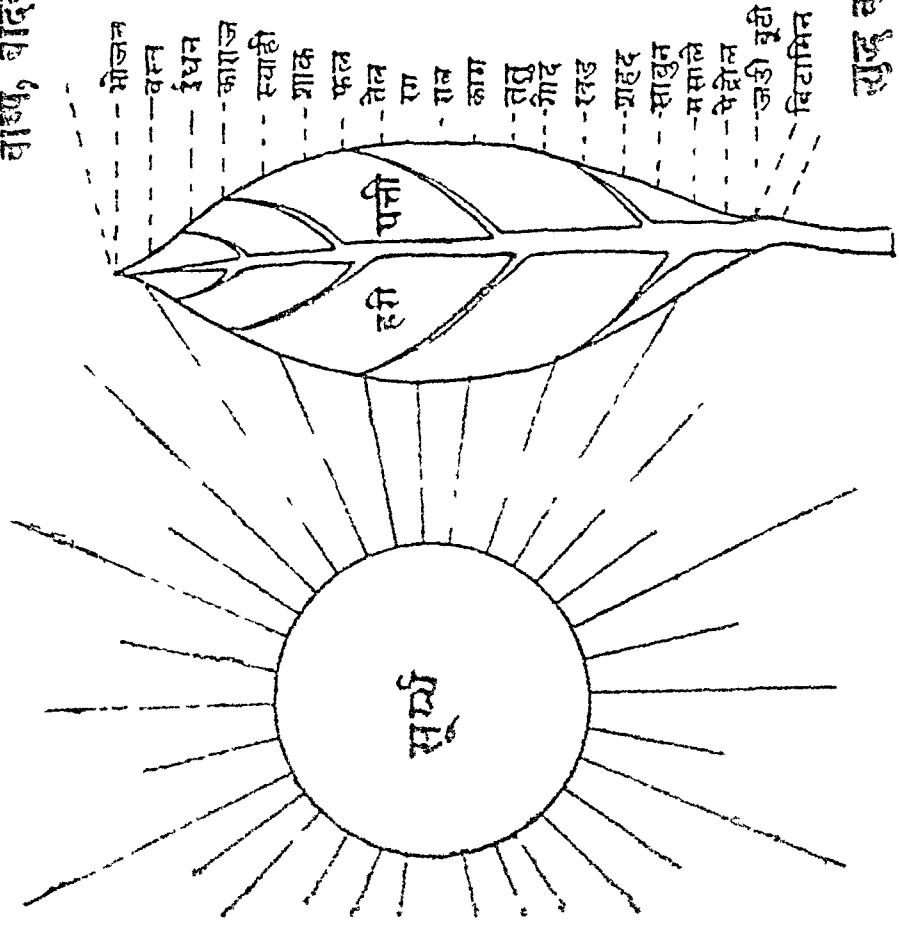
सूर्य्य किरणों की हरी पत्तियों में प्रविष्ट तथा बन्दीकृत शक्ति ही पेड़-पौधों द्वारा रूपान्तरित होकर शुद्ध वायु, वर्षा, विभिन्न प्रकार के भोजन, वस्त्र, शक्तियाँ इत्यादि, तथा व्यवसाय की असंख्य अत्यावश्यक और सुखद वस्तुओं व मनुष्य जाति के वैभव, उन्नति तथा पराक्रम का मूल कारण है।

श्री छिराजी छरोड़ा
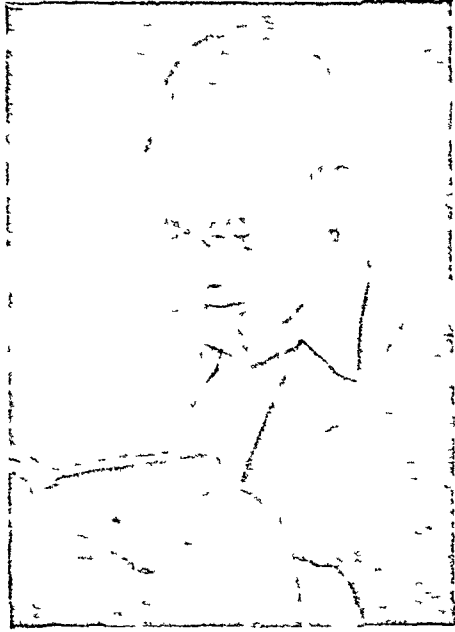
वनस्पति-विज्ञान के विद्यार्थी अपने कनिष्ठ पुत्र

शिवाजी अरोड़ा

को

स्नेह-भेंट

—ना० प्र० अरोड़ा

प्रस्तावना

विज्ञान-शास्त्र के ज्ञाताओं ने समस्त भूमण्डल के पदार्थों को तीन भागों मे विभक्त किया है—(१) जीवधारी (२) वनस्पति और (३) खनिज। पहले और दूसरे भाग के पदार्थो मे ज्ञान होती है। इसलिए उन्हे सेन्द्रिय पदार्थ भी कहते है। तीसरे भाग के पदार्थों को निरिन्द्रिय अर्थात् जड पदार्थ कहते हैं। जिस शास्त्र मे पहले दो भागों के पदार्थों का वर्णन है उसे जीव-विद्या कहते हैं। वनस्पति-शास्त्र भी इसी जीव-विद्या की एक शाखा है। इसमे केवल वनस्पतियों का वृत्तान्त है। इस शास्त्र से हमको मालूम होता है कि वृक्षो की शकल कैसी है, उनकी बनावट कैसी है, उनके जीवन के नियम क्या है, वर्तमान काल मे उनके विभाग किस तरह किये गये हैं, भूतकाल मे वे किन-किन विभागों मे विभक्त किये गये थे, उनमे कौन-कौन गुण है—इत्यादि। और भी अनेकानेक बातों का, जो वृक्षों से सम्बन्ध रखती हैं, वनस्पति-शास्त्र मे वर्णन रहता है।

इस शास्त्र के दो भाग है। पहले भाग का नाम अङ्गाशविचार है। उसमे वृक्षों की बाहरी और भीतरी बनावट तथा उनके भिन्न-भिन्न अवयवो का वर्णन होता है। दूसरे भाग का नाम जीवाश-विचार है। उसमे वृक्षो के जीवन का वृत्तान्त रहता है। इसी तरह इस शास्त्र के प्रथम भाग अर्थात् अङ्गाश-विचार के भी दो भाग हैं। पहले मे वनस्पतियों के बाहरी आकार-प्रकार का वर्णन होता है और दूसरे मे भीतरी का। जिस भाग मे वनस्पतियों के बाहरी अश से सम्बन्ध रखनेवाली बातों का विचार किया जाता है, उसे अङ्गरेजी मे 'मारफालोजी' अर्थात् शरीर-तुलना-शास्त्र कहते है।

आइए पहले यह देखे कि बीजावस्था से आरम्भ करके वृक्षो की वृद्धि किस तरह होती है। उदाहरणार्थ, एक बादाम लीजिए और थोडी देर उसे

पानी मे पड़ा रहने दीजिए। फिर उसे निकाल कर देखने पर उसमे ऊपर एक बादामी रङ्ग की झिल्ली देख पड़ेगी। उसे अलग करने पर भीतर सफेद गूदा सा दिखाई देगा। यह झिल्ली और गूदा बादाम के उस बीज के दो भाग है। झिल्ली का शास्त्रीय नाम बीजावरण है और गूदे का कलल। यह कलल बीज का मुख्यांश है। इसी मे भावी वृक्ष के मुख्य और आवश्यक अङ्ग सूक्ष्मरूप मे उपस्थित हैं। प्रारम्भिक अवस्था मे इन अङ्गो के पालन-पोषण के लिए कुछ सामग्री भी वही मौजूद रहती है। जब तक ये अङ्ग इस योग्य नही हो जाते कि वे अपना पालन-पोषण आपही कर सके तब तक कलल का वह अंश, जो आवश्यक नहीं होता, इनका पोषण करता है।

कलल के भी दो भाग होते है। छिलका उतारने पर बादाम का जो भाग रह जाता है उसमे एकही-से दो गूदेदार टुकड़े होते है। ये दोनो टुकड़े अलग-अलग किये जा सकते है। इनको बीज-दल या बीज-पल्लव कहते है। यही दोनो गूदेदार टुकड़े वृक्ष का पालन-पोषण प्रारम्भिक अवस्था में करते है। इसीलिए इनको पोषणकारिणी पत्तियाँ भी कहते है। कलल का यह पहला भाग है।

इन दोनो गूदेदार टुकड़ों के बीच मे एक अंकुर होता है। इसी अंकुर से ये दोनों टुकड़े जुड़े रहते है। इसका एक सिरा इन टुकड़ो के भीतर रहता है और दूसरा बाहर। जो भाग बाहर रहता है उसे ऊर्ध्वतनु कहते है और जो भीतर रहता है उसे अधस्तनु कहते है। यही दोनो तनु कलल का दूसरा भाग कहलाते हैं। वृक्ष उत्पन्न होने पर अधस्तनु से वृक्ष की जड़ बनती है और ऊर्ध्वतनु से वृक्ष का धड़।

हर बीज के कलल या गर्भ मे इन दोनों भागों, अर्थात् दल और तनु का होना परमावश्यक है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि हर बीज के ग

हिस्से मे दो भाग हो, क्योंकि बहुत से ऐसे भी बीज होते है जिनके दल दो भागो मे विभक्त नही होते ।

दलो के अनुसार सम्पूर्ण फूलदार वृक्षो की तीन श्रेणिया की गई है। प्रथम श्रेणी मे वे वृक्ष है जिनके बीज के गूदेदार टुकडे के दो भाग हो सकते हैं। उन्हे द्विदल कहते है। दूसरी श्रेणी मे वे है जिनके बीज के गूदेदार टुकडे मे एक ही भाग होता है। उन्हे एकदल कहते है। तीसरी श्रेणी मे वे वृक्ष हैं जिनके बीज मे गूदेदार भाग ही नही होता। उनको निर्दल कहते है। परन्तु इस तीसरी श्रेणी के वृक्षों मे न तो असली फूल ही होता है और न असली बीज ही।

बीज बोने पर उसका एक भाग, अर्थात् अधस्तनु नीचे की तरफ जाकर वृक्ष की जड बन जाता है, और दूसरा भाग, अर्थात् ऊर्ध्वतनु, ऊपर की ओर बढ कर वृक्ष का धड बन जाता है। रहे बीज के दल सो उनसे वृक्ष की पहली पत्तियाँ बनती हे। यही तीन चीजे, अर्थात् जड, धड और पत्तियाँ, वृक्ष के प्रधान अङ्ग है। यही अङ्ग वृक्ष का पालन-पोषण करते है। इस लिए उन्हें पोषण करने वाले अङ्ग भी कहते है।

वृक्षो मे कुछ अङ्ग और भी होते हें। उनका काम यह है कि नया बीज बना कर अपने सदृश दूसरे वृक्ष पैदा करे। इनको उत्पादक अङ्ग कहते हैं। अतएव वृक्षो मे दो तरह के अङ्ग होते है—एक तो पालन पोषण करने वाले अर्थात् पोषक-अङ्ग, और दूसरे अपने सदृश वृक्ष पैदा करने वाले। अर्थात् उत्पादक-अङ्ग, इन अङ्गो का वर्णन करना और अन्य आवश्यक तथा विशेष बाते बतलाना वनस्पति-शास्त्र का विषय है। इस प्रस्तावना मे यह सब कुछ नहीं लिखा जा सकता। यहाँ तो कुछ रोचक सामग्री सग्रहीत कर दी गई है। विशेष रुचि रखने वालों को वनस्पति-शास्त्र की अन्य पुस्तको को पढना होगा।

—नारायण प्रसाद अरोडा

विषय-सूची

भूमिका

श्रद्धेय अरोड़ा जी ने आदेश किया है कि मैं उनके बन्दीगृह के अवकाश में लिखी हुई पुस्तक "पौधों की दुनिया" की भूमिका लिखूं। यह आदेश उन्हीं के योग्य है, और उनकी उदारता, सहृदयता तथा प्रेम का सूचक है। उनका हमारे कुटुम्ब से चिरकालीन सम्बन्ध है—वह मेरे ज्येष्ठ भाई के लँगोटिया यार हैं और हम लोगों पर उनकी हमेशा बड़ी कृपा रही है। मेरे वह स्कूल में गुरु भी रह चुके हैं। इस प्रकार उनके और हमारे बीच एक घनिष्ट संपर्क रहा है और उनके आदेश की पूर्ति मैं अपना परम धर्म समझता हूं।

विचार करके देखा जाय तो जीवन वस्तुतः संग्राम है, जन्म से मृत्यु पर्यन्त, हर घड़ी और पल, जीवधारियों को अपनी परिस्थिति के साथ, किसी न किसी रूप में, संग्राम करना पड़ता है, कभी कभी तो यह स्पष्ट दिखाई देता है, पर अनेक दशाओं में वह गुप्त रीति से ही प्रचलित रहता है, तथा ऊपर से एक प्रकार की शान्ति सी दिखाई देती है। जीवन की संपन्नता तथा सार्थकता उसी हद तक होती है जिस हद तक इस संग्राम में विजय की प्राप्ति होती है। विजय प्राप्त करना निर्भर है पर्याप्त और समुचित साधनों पर, और साधनों का निर्णय तथा प्रयोग वही व्यक्ति कर सकता है जिसको ज्ञान हो अपनी परिस्थिति के और स्वयं अपने विषय में। इसी आदर्श का उल्लेख 'चाणक्य-नीति' में किस सुन्दरता से किया गया है:—"कः कालः कानि मित्राणि को देशः कौ व्ययागमौ। कस्याहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः"। ज्ञान-बल एक बड़ी और अति प्रभावशाली शक्ति है जिसके द्वारा मनुष्य ने और शक्तियों को अपना दास बना कर क्रमशः प्रभावशाली अनुसंधान और आविष्कार, गूढ़ से गूढ़ विषयों पर पर डाले, और उस खजाने को जिसको प्रकृति ने सृष्टि के आदि से लाखों वर्षों तक कन्जूस की भांति छिपा कर रक्खा था अपने कब्जे में

कर लिया। इनकी चर्चा का यह स्थान नहीं तो भी सरसरी भाँति कुछ का स्मरण करा दिया जाय—उसी बल का यह फल स्वरूप है कि मनुष्य आज जल-चरो की भाति गभीर से गभीर सागरो मे विचरता है, पक्षियो की भाँति उनकी कई गुना तेजी से उड़ता हे, सैकडो-कोसों की दूरी पर बैठे हुए व्यक्तियों से बातचीत कर सकता है और उनको देख भी सकता है, इत्यादि। साराश ज्ञान-बल ही असली बल है। इसीलिए कहा गया है "ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः" अग्रेजी मे भी कहावत है 'Knowledge is power." (ज्ञान बल है।)

प्रकृति-ज्ञान, मनुष्य की विद्या का एक बहुत बडा अश है। जिस समय मनुष्य जाति का उत्थान पर्याप्त अश मे नही हुआ था और मनुष्य अशिक्षित ही नही वरन् असभ्य और जगली था उस समय केवल प्रकृति की पुस्तक ही उसके ज्ञान-प्राप्ति का साधन थी और उसी के अध्ययन से वह धीरे २ सभ्य और शिक्षित होने का दावादार हो गया। यह प्रकृति की पुस्तक बिना किसी खर्चे के सभी के लिए प्राप्य है चाहे कोई शिक्षित हो व अशिक्षित, पर कुछ लोगो ने इसका विशेष रूप से अध्ययन किया है और प्राकृतिक दृश्यो तथा क्रियाओ पर मनन किया है, जिनका अवसर और अवकाश सर्वसाधारण के समय और शक्ति के बाहर है। उनके मनन और अध्ययन के अनुभवो का, लेखों द्वारा, सर्वसाधारण थोडे ही समय मे तथा थोडी ही मेहनत से पूरा लाभ उठा सकते है। पाश्चात्य देशों में अनेक ऐसी पुस्तके है जिनको सुप्रसिद्ध वैज्ञानिको ने जनता की शिक्षा और मनोरजन के लिए लिखा है, जिनके द्वारा वहाँ के साधारण व्यक्ति का भी ज्ञान और जानकारी दूसरे देशो के शिक्षित व्यक्तियो से कही अधिक है। वहाँ का बच्चा-बच्चा छोटी ही अवस्था मे पर्याप्त ज्ञान अपने माता-पिता के साधारण वार्तालाप द्वारा ही प्राप्त कर लेता है। यही कारण है कि वहाँ के लोग इतने सुपरिचित, सतर्क और पराक्रमी होते है और हर जगह

अपना सिक्का जमा लेते है। हमारे हिन्दुस्तान मे प्रायः ऐसी पुस्तकों की कमी है, हिन्दी भाषा मे तो इनी-गिनी ही होगी। इनमे से कई को अरोड़ाजी ने समय-समय पर लिखा है। हिन्दी-जगत और प्रकृति-ज्ञान के जिज्ञासुओ को इस बात का गौरव और अरोड़ाजी के प्रति अनुगृहीत होना चाहिये।

प्रस्तुत पुस्तक मे अरोड़ाजी ने वनस्पतियो के सम्बन्ध क बहुत सी मनोरंजक और उपयोगी अनेक स्थानों मे वर्णित बातों का सकलन किया है, और उद्भिज-जगत का पाठको को दिग्दर्शन कराया है, जिससे इस जगत के निवासियों की आकृति व निर्माण, उनकी उत्पत्ति व इतिहास, उनका गार्हस्थिक तथा सामाजिक जीवन, उनके अंग-प्रत्यंग तथा उनकी क्रियाएँ, उनका विवाह, प्रजनन व प्रसार, उनके शत्रु और मित्र, पत्रों पुष्पो तथा फलो की उपयोगिता; पौधो की विलक्षणता व विचित्रता, इत्यादि, इत्यादि, अनेक रोमाचकारी, अपरिचित, विज्ञापक तथा शिक्षापूर्ण विषयो का पर्याप्त ज्ञान थोड़े ही समय में प्राप्त हो जाता है।

वस्तुतः वनस्पति-जगत एक अद्भुत संसार है, बहुत से लोग तो कदाचित इस बात से भी अनभिज्ञ है कि पेड़ पौधे सजीव है। पर थोड़े से ही विचार व जाँच से पता लग जाता है कि और जीवों की तरह उनकी उत्पत्ति होती है, वह बढते है, जीवन संबन्धी अनेक क्रियाएँ करते है, बालबच्चे पैदा करते है और अंत मे मर जाते है। पर इनमे बहुत सी विलक्षणताएँ है जो साधारणतः न तो ज्ञात है और न एकाएक विश्वासनीय है। इस जगत के निवासी बिना मुँह के खाते-पीते है, बिना पैरों के चलते है, बिना हाथों के पकड़ सकते है, नेत्रहीन, देख सकते हैं और स्नायु व मस्तिष्क न होने पर भी वह परिस्थिति का ज्ञान प्राप्त करके अपना पूरा निर्वाह कर लेते हैं। यह जानकर तुलसीदास जी के वाक्य, जो नीचे उद्धृत किए जाते है, सहसा याद आ जाते हैं :—

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना, कर बिनु कर्म करइ विधि नाना ॥
आनन रहित सकल रस भोगी, बिनु बानी वकता बड जोगी ॥
तन बिनु परस नयन बिनु देखा, गहइ घ्रान बिनु बास असेषा ॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी, महिमा जासु जाइ नहि बरनी ॥

पर इन विलक्षणताओं को छोड़ कर, यद्यपि वह नानी की कहानी की भांति रोचक और मनोरंजक है, पेड़ पौधों की सृष्टि-रचना तथा जंतु-जगत, विशेष कर मनुष्य-जीवन और उसके उत्थान और उन्नति के साथ, अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है और इस महत्व का है कि उससे बारे में कुछ विशेष निवेदन करने का साहस करता हूँ।

सृष्टि की रचना में वनस्पतियों का जो स्थान और महत्त्व है और उनकी जो उपयोगिता है उसके बारे में हम में से बहुत लोगों को साधारण ज्ञान भी नहीं है। इसके बहुत से कारण हैं, पर प्रधान कारण यह है कि चीज़ों को देखते-देखते हम इतना अधिक उनसे परिचित हो जाते हैं कि उनको साधारण और महत्त्वहीन समझने लगते हैं और उनके प्रति हमारे मन में उदासीनता का भाव आ जाता है। इससे जिज्ञासा नहीं रहती। इसी कारण सृष्टि में जो पारस्परिक सम्बद्धता है उससे हम बिलकुल अनभिज्ञ रहते हैं। अंगरेजी का कहा हुआ वाक्य Familiarity breeds contempt (परिचय बढ़ने से उदासीनता पैदा हो जाती है) बिलकुल लागू है।

पर थोड़े ही विचार से स्पष्ट जान पड़ेगा कि वनस्पतियों का जंगम तथा जड़ दोनों सृष्टियों के साथ बड़ा महत्त्वपूर्ण और घनिष्ठ सम्बन्ध है। संसार के जीवधारियों का सारा भोजन और काम करने की शक्ति, वायु की स्वच्छता, जल-वायु को प्राणि-मात्र के लिए अनुकूल बनाए रखना यह और इनके अतिरिक्त और बहुत सी क्रियाएँ और घटनाएँ तथा लाभ नितान्त वनस्पतियों

जीवहीन और जीवधारी पदार्थों मे है। प्रायः हर एक बात मे वह एक दूसरे से प्रतिकूल ह। यह होते हुए भी विचार करने से मालूम पडता है कि इन दोनो मे भी बडी घनिष्ठता है। 'पच-तत्व* का बना पीजरा' यह एक प्रसिद्ध वाक्य है और यह न केवल मनुष्यो पर ही लागू है वल्कि समस्त जीवधारियो पर। अंगरेजी मे भी कहा गया है **'Dust thou art to just returneth'** यह बात यथार्थ है। जिन तत्त्वो से जीवधारियो के शरीर निर्मित हुए है वह सब जड पदार्थ है। इनमे जीव का लेश मात्र भी अंश नही। पर क्या विलक्षणता है कि जीवधारियो के सम्पर्क से जड़ चेतन बन जाता है! यही शरीर मे प्रवेश होकर रक्त मास अर्थात् आद्यसार (protoplasm) बन जाते है, और इन्ही मे वर्तमान या सचित शक्ति से समस्त जीवधारियो की क्रियाओ का सचालन होता है। कैसी अचम्भे की बात है कि निर्जीव सजीव रूप मे परिणत हो जाता है पर यह तभी सम्भव है जब जड पदार्थ प्राणियो के अग मे प्रवेश करे और वहाँ रासायनिक क्रियाओ द्वारा उनका परिवर्तन हो, अतः जीवधारियो मे यह अद्भुत शक्ति है कि वह जड पदार्थो को जीवित बना देते है। इसके विपरीत जब जीवधारियो का प्राणान्त होता है तो उनके शरीर फिर जड पदार्थों मे विश्लेपित हो जाते है। यह रूपान्तर लगातार हुआ करता है। पर इसमे विशेपता यह है कि सजीव प्राणी निर्जाव पदार्थो के बिना पल मात्र भी जीवित नही रह सकते। इसके विरुद्ध जड पदार्थों का अस्तित्व जीवधारियों पर निर्भर नहीं है।

जीवित पदार्थो का पारस्परिक सम्बन्ध अधिकतम जटिल है। इसका कारण यह है कि जड पदार्थ की अपेक्षा इनमे चेतनता है और यह क्रियावान होते है। इनकी क्रियाएँ अगणित हैं और एक श्रेणी के जीवधारियो की क्रियाएँ

---

* पृथ्वी जल, वायु, अग्नि, आकाश।

दूसरी श्रेणी के जीवधारियों की क्रियाओं पर हर क्षण प्रभाव डाला करती है—यथार्थतः परस्पर निर्भर है। वनस्पतियों के बनाए हुए पदार्थ या स्वयं वनस्पतियाँ ही अनेकों प्रकार जन्तुओं के काम मे आती हैं, इसके प्रतिकूल जन्तुओं के नष्ट अंगो या शरीर के अवयवो का प्रयोग वनस्पतियाँ करती रहती है, पर बिना वनस्पतियो के जन्तुओं का जीना असम्भव है—वनस्पति-जगत जन्तुओं के आश्रित नही है। इस कारण पेड़-पौधो का ससार की रचना मे प्रमुख स्थान है। उन्ही के द्वारा पालन, पोषण और परिचालन होता है।

सबसे प्रथम जन्तुओं का सारा भोजन वनस्पति-जगत से ही प्राप्त है, और यह स्पष्ट है कि बिना भोजन प्राणियों का जीना असम्भव है। यो तो बहुत से ऐसे उदाहरण मिलेगे जहाँ बिना भोजन प्राणी न कि कुछ दिन वरन् महीनो और वर्षो जीवित रह सकते है, कुछ जन्तु तो ऐसे है जो प्रतिकूल परिस्थिति के कारण एक प्रकार की घोर निद्रा में सप्ताहों और महीनो तक निमग्न रहते है, अँगरेजी मे इसको Hibernation कहते है। ऐसी दशा मे प्राणी की सब क्रियाएँ अति मन्द हो जाती है—श्वास-क्रिया बिलकुल धीमी हो जाती है, हृदय की गति शिथिल पड़ जाती है, पाचन और मल त्याग तो बिलकुल ही स्थगित हो जाते हैं। मतलब यह कि ऐसी दशा में जीवी मृतक के समान हो जाता है, केवल उसका प्राण पखेरू ही किसी अज्ञात कारण से फँसा रह जाता है—इस दशा की उस घडी से तुलना की जा सकती है जिसकी चाभी नही खतम होती पर गति बन्द हो जाती है। यह सब होते हुए भी इस दशा मे जिन भी क्रियाओं का कुछ भी सञ्चालन होता रहता है वह पहले के किसी न किसी रूप मे विद्यमान भोजन की ही शक्ति के सहारे! प्राणी का भार निरन्तर कम और वह स्वयं क्षीण या कृश होता जाता है। यदि यह दशा सीमा के बाहर जारी रहे तो प्राणान्त भी हो जाता है। ऐसे उदाहरण जन्तु-जगत में बहुत देखे गए है जैसे ध्रुवी रीछ (Polar

Bear) हेजहाग (Hodgehos) डारमाउस (Dormouse), चिमगादड, कुछ मेढक और मछलियाँ, बहुत से घोंघे (Snails) और कीड़े, गिलहरी, बीवर (Beaver), चिउँटी, और वनस्पति-जगत मे, बीज, कन्द और बहुत से वृक्ष-विशेषत शरद ऋतु और ठडे प्रदेशों मे रहने वाले, मनुष्यों मे भी समाधि की अवस्था में योगी कई महीनो तक बिना जल और पानी के जीवित रहते है। बहुत से राजनैतिक बन्दियों ने भी सताहों और महीनों तक अनशन किया है—आयरलेन्ड के मेयर मेकस्वाइनी का अनशन बड़ा प्रसिद्ध है, लगभग २॥ महीने तक उनका अनशन जारी रहा और उसके उपरान्त प्राणान्त हो गया—हिन्दुस्तान मे भी जतिन बोस का नाम प्रख्यात है इन्होंने भी अनशन करके प्राण त्याग दिया। महात्मा गाँधी के तो कई अवसरों पर किए हुए अनशन बहुत ही विख्यात हैं। इनके अतिरिक्त मनुष्यों मे कभी-कभी एक प्रकार की बीमारी हो जाने के समाचार पढने मे आते हैं जिसके कारण वह एक लम्बी गहरी नींद मे सालों, कभी-कभी बीस-बीस तीस-तीस साल तक सोए रहते है! पर इस दशा को सचमुच क्या जीवित रहना कहना अनुचित न होगा? जीवन तो उसका नाम है जो पराक्रम-युक्त हो अन्यथा क्रियाहीन जीवन तो केवल अस्तित्व ही क़ायम रखना है। यथार्थतः वह मृत्यु के ही बराबर है, ऐसे जीवन का क्या कोई भी महत्व है?

साराश भोजन ही प्राणिमात्र का पालन और पोषण करता है* और उसी के बूते वे बडे-बडे काम कर जाते हैं।

ससार का सारा भोजन अन्त मे वनस्पति-जगत से ही प्राप्त होता है, यह तो स्पष्ट ही है कि शाकाहारी प्राणियों का भोजन वनस्पति स्वरूप है या

---

*बिना भोजन के हाल ही में कितने मनुष्यों की मृत्यु, विशेष कर बंगाल में हो गई। इतने कदाचित ५॥ साल की लड़ाई में न मरे होंगे।

उनके विभिन्न अङ्गो से प्राप्त है, मासाहारी जीव भी जो ज़ाहिरा जन्तु जगत से अपना भोजन लेते हुए देखे जाते है, वनस्पतियो से ही पोसे और पाले हुए मांस का भक्षण करते हैं क्योंकि अन्त मे वे पशु जिनका मांस भोजन के काम में लाया जाता है स्वय वनस्पतियों को खाकर जीते और बढ़ते है। किसी भी पक्ष से इस प्रश्न पर विचार किया जाय यही दिखाई देगा कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में सारे संसार के खाद्य पदार्थों का अन्नपूर्णा-भंडार वनस्पति ही है। भोजन क्या है और कैसे बनता है इसका उल्लेख करने के लिए बड़े विस्तार की आवश्यकता है जो इस समय नहीं किया जा सकता। संक्षेप मे सारा भोजन हरी पत्तियों द्वारा बनता है। इनमें उपस्थित पत्रहरित (Chlorophyll) में, सूर्य किरणो के सहारे हवा से शोषण की हुए कार्बन डाइ-आक्साइड (Co_2) और भूमि से प्राप्त किया हुआ पानी अनेक रासायनिक क्रियाओं द्वारा, और भूमि से प्राप्त किये हुए और तत्त्वो के लवणो के संयोग से, न केवल संसार के सारे विभिन्न प्रकार के भोजन वरन् लाखों और करोड़ो प्रतिदिन उपयोग में आने वाले पदार्थ निर्माणित होते हैं। हरी पत्तियों का सृष्टि की रचना में बड़े महत्त्व का स्थान हैं, वे यथार्थतः प्रकृति की पारस पत्थर है जिनके सम्पर्क से जड़ चेतन बन जाते है।

भोजन के अतिरिक्त प्राणियों के लिए शक्ति की बड़ी आवश्यकता है। बिना शक्ति जीवधारी कोई क्रिया कर ही नहीं सकते। यह शक्ति भोजन मे ही सुषुप्तावस्था मे विद्यमान है और इस लिए भोजन ही प्राणियों की सारी शक्ति का भण्डार है। पर इस दशा मे वह गड़े हुए सोने के समान निरर्थक है। या भोजन की तुलना बारूद से की जा सकती है, जब तक उसमे आग नहीं लगाई जाती तब तक उसमे कुछ परिवर्तन नहीं होता, पर आग के स्पर्श मात्र ही से उसका बड़े धड़ाके के साथ विस्फोटन होता है और उससे निकली हुई शक्ति का अनेकों प्रकार प्रयोग किया जा सकता है। ठीक यही भोजन

की भी दशा है। उसमें शक्ति का खज़ाना बन्द है और जब तक उस भण्डार का ताला खोला न जाय तब तक उसका कुछ भी उपयोग नहीं किया जा सकता। यह क्रिया भोजन के भस्मीभवन (oxidation) द्वारा होती है और इसके लिए आक्सिजन (o) की आवश्यकता है जो कि वायु मे पर्याप्त रूप मे वर्तमान है, इसका श्वास द्वारा शरीर मे प्रवेश होता है, वहाँ वह भोजन से मिलकर उसको भस्मित कर देती है जिससे भोजन का स्वरूप बदल जाता है। उसके विषम-यौगिक इस क्रिया द्वारा क्रमशः सरल होते जाते है और वह शक्ति जो भोजन के अणुओ को एक दूसरे के साथ बड़ी जटिलता से बाँधे हुई थी बंधन से छूटकर लभ्य हो जाती है और उसका अनेकों प्रकार उपयोग किया जा सकता है। इसीके द्वारा प्राणियो की अनेको क्रियाएँ हुआ करती है। रासायनिक शक्ति, तापशक्ति, विद्युच्छक्ति, प्रकाश शक्ति, शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति इत्यादि, प्राणियो मे विकसित हुई शक्तियाँ एक ही शक्ति की रूपान्तर मात्र हैं। जीवित वस्तु इस दृष्टिकोण से देखी जायँ तो क्रियाओ की एक पुंज है और इन्ही के कारण वह जड पदार्थों से भिन्न है। भोजन को भस्मित करने के लिए केवल एक ही साधन है—आक्सिजन। यह आक्सिजन हमारी वर्तमान परिस्थिति मे, और जहाँ तक मालूम है इस पृथ्वी के सारे इतिहास मे, केवल वनस्पतियो ही द्वारा अनेक यौगिकों से जिनमे वह सम्बद्ध रहती है, बंधन-मुक्त की जाती है—और अचंभे की बात यह है कि वह वनस्पतियो की मुख्य क्रिया यानी प्रकाश-संश्लेषण (Photo synthesis) का उपफल (bye product) है। सारे वायुमंडल की आक्सिजन, अतः, वनस्पतियों ही द्वारा प्राप्त है—वनस्पति न होते तो सारा वायुमंडल आक्सिजन रहित होता और कोई प्राणी ही न होते। विषमई CO_2 को वनस्पति ही स्वच्छ प्राणद आक्सिजन मे परिवर्तित कर सकते है। अपनी श्वास-क्रिया के लिए भी, जिसके द्वारा उनको शक्ति प्राप्त होती है, प्राणी पौधों ही के आश्रित हैं—भोजन

बिना तो कुछ काल तक मृत्यु टल सकती है, पर आक्सिजन के न मिलने से अल्प ही में प्राणान्त हो जाता है।

यह दोनों भोजन और शक्ति-प्राणिमात्र के लिए अनिवार्य है, मनुष्यजाति तो और अनेकों प्रतिदिन की सुविधाओं और आवश्यकताओं के लिए वनस्पतियों पर अवलंबित है। वास्तव में वह उनका दास बन गया है, और मनुष्य की जितनी अधिक सभ्यता उतनी ही उसकी दासता है, क्योंकि बनस्पतियों के ही रक्तमांस से उसकी उत्पत्ति हुई है और उन्हीं के सहारे उसकी उन्नति होना सम्भव है—ध्यान देकर आप सोचिए, जितना अधिक सभ्य मनुष्य उतना ही अधिक वह वनस्पतियों या उनसे बने हुए पदार्थों पर आश्रित है, इसका उल्लेख संक्षेप में किया जायगा।

आदि-कालीन मनुष्य का जीवन तुलसीदास जी के वाक्य 'भूमि शयन वल्कल वसन असन कन्द फल मूल' से बड़ी यथार्थता से वर्णित किया जा सकता है—उस समय उसकी आवश्यकताऐं बहुत ही अल्प थी। वह केवल कन्द, मूल, फल या शिकार किए हुए पशुओ के मास पर ही अपना निर्वाह करता था और पेड़ों की छाँह या कन्दरो मे रहता था, उन्ही की छाल व पत्तो से अपनी नग्नता को छिपाता था। उस समय न काश्तकारी थी, न खाना पकाने के लिए कोई साधन था और न रहने के लिए मकान थे। सब से पहला उन्नति का सोपान आग की उपलब्धि हुई। पहले तो वह केवल खाना पकाने और तापने ही के काम मे आती थी पर ज्यो २ समय बीतता गया आग के सहारे मनुष्य ने न जाने कितनी विजय प्राप्त कर ली और कितनी भेद की बातें प्रकृति से ऐंठ कर उस पर अधिकाअधिक अपना सिक्का जमा लिया। जो उपलब्धि आदि मे आकस्मिक थी आज उसी अग्निदेव ने Stevenson और Watt की ईजादो के सहारे दुनिया का स्वरूप ही बदल दिया। आज क्या हम आग-रहित दुनिया का स्वप्न मे भी ध्यान ला सकते है ?

यह आग किसके सहारे टिकी है और कैसे उत्तेजित होती है? इसका मूल कारण है लकड़ी, कोयला, पेट्रोल, तेल इत्यादि और यह सब प्राचीन या आधुनिक वनस्पतियों के परिश्रम का ही फलस्वरूप हैं।

कृषि भी सभ्यता का एक आदि सोपान है—जब से मनुष्य ने कृषि करना सीखा उसी समय से उसके गार्हस्थिक तथा सामाजिक जीवन की नींव पड़ी और वाणिज्य तथा व्यापार का सिलसिला शुरू हुआ। इसके कारण कितने अनेक प्रकार के अन्तर्जातीय और अन्तर्राष्ट्रीय पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित हुए और कितने प्रकार की घटनाएँ मनुष्य के इतिहास में हो गई—इसका संक्षेप में भी वर्णन करना बड़ा जटिल विषय है। इसी के कारण अनेक प्रकार के शासन स्थापित हुए, व्यवसाय बढ़ा, अनेक प्रकार की संस्थाएँ बनीं और मनुष्य जाति की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति हुई, पर इसी के ही कारण बड़े विकार भी पैदा हुए, गुलामी और कलह की नींव इसी कारण पड़ी, वर्तमान सभ्यता इसी का अधिक विकास और विस्तार है, इसके कहने की आवश्यकता नहीं कि खेती वनस्पतियों से ही सम्बन्ध रखती है।

सभ्यता का एक और चिन्ह वस्त्र धारण करना है, आदि में केवल यह शरीर ढकने के काम में आते थे। पर धीरे २ वह छटा बढ़ाने के काम में आने लगे और अनेकों प्रकार के फ़ैशन प्रचलित होगए। इस आवश्यकता को भी पूरी करने के लिए आदि में, और अब तो और भी अधिक, मनुष्यमात्र पौधों द्वारा निर्मित सूत पर निर्भर हैं, सूती कपड़े तो प्रत्यक्ष वनस्पति जगत से प्राप्त हैं पर ऊनी और रेशमी कपड़े भी वनस्पतियों पर पोसे-पले जानवरों व कीड़ों के रोंए व तंतुमात्र है।

सभ्य मनुष्य निवास स्थान बनाता और उनमें रहता है। कम सभ्य और ग़रीब मनुष्य झोपड़ियों में रहते हैं जिनका अधिकांश पेड़ों के भिन्न २ भागों का बना हुआ होता है, पर सभ्यता बढ़ने पर बड़े विशाल और भिन्न २ प्रकार के

निवास स्थान बनाए जाने लगते हैं जो न केवल प्रकृति की गर्मी, सर्दी और वर्षा से बचने के काम में आते हैं वरन् सामाजिक, धार्मिक, व्यवसायिक और राजनैतिक इत्यादि संस्थाओं और कार्यों के लिए भी वह बनाए जाते हैं। अब जरा सोच कर देखिए कि वर्तमान निवास स्थानों में कितने प्रकार के वनस्पतियों से प्राप्त या उनकी सहायता से बने हुए पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है—उदाहरण रूप से छत तथा दरवाजों की लकड़ी, भाँति २ का उपस्कर (Furniture) चारपाइयाँ, पर्दे, ईंट, सीमेन्ट, भाँति २ के बर्तन इत्यादि, इत्यादि यह सब या तो वनस्पतियों के भाग हैं या उनके सहारे बनाए जाते हैं।

लिखना-पढ़ना भी सभ्यता का चिन्ह है—इसके लिए भी आदि काल में अब तक मनुष्य-जाति वनस्पतियों की ही बनाई हुई या उनमें बनी हुई चीजों पर अवलम्बित है—स्याही, कागज, लेखनी, पुस्तकें, समाचार-पत्र, छापने की कलें और अनेक प्रकार की सामग्री और साधन इन सब के लिए हम किसी न किसी रूप में पौधों के ऋणी हैं।

पहले बताया जा चुका है कि प्रत्येक प्रकार के कामों और क्रियाओं के लिए शक्ति किसी न किसी स्वरूप में आवश्यकीय है। आद्यावस्था में मनुष्य केवल अपने खाने से प्राप्त की हुई शक्ति का परिश्रम रूप में प्रयोग करता था, पर जैसे-जैसे वह उन्नति करता गया वैसे-वैसे उसने प्रकृति की और शक्तियों को भी अपना दास बनाने की चेष्टा की और सफल हुआ, जैसे हवा और पानी का वेग, उत्तलित पदार्थों का प्रयोग, इत्यादि। पर आग की उपलब्धि के पश्चात् तो मनुष्य ने प्रकृति के सारे शक्ति भंडार की कुञ्जी प्राप्त कर ली, जितनी शक्ति भूमंडल में विद्यमान है उसका मूल कारण सूर्य्य है। उसी की रश्मियों की शक्ति का वह परिवर्तित स्वरूप है। उन्हीं की शक्ति हवा और पानी के वेग का कारण है क्योंकि हवा पृथ्वी तल के गरम होने के कारण चलने लगती है और पानी वाष्प बनकर आकाश में पहुँच कर बादल स्वरूप हो जाता है और फिर

वर्षा या बरफ के स्वरूप मे भूमि तल पर आता है और ऊँचे स्थान से नीचे स्थान की ओर उसका प्रवाह होने लगता है। हवा और पानी के वेग से अनेक प्रकार के काम लिए जाते है और कले चलाई जा सकती है। या शक्ति का स्वरूप बदल दिया जाता है, सूर्य्य ही की रश्मियों की शक्ति काष्ठ, कोयला व पेट्रोल, गैस इत्यादि के स्वरूप मे जगह २ पर बिखरी हुई है। वर्तमान काल मे जो शक्ति उपयोग मे लाई जा रही है उसका सबसे बड़ा अश काष्ठ, कोयला व पेट्रोल के ही जलाने से प्राप्त होता है और यह सब पदार्थ वनस्पतियों द्वारा परिवर्तित की हुई सूर्य्य की शक्ति के स्वरूप है, काष्ठ तो आजकल के वनस्पतियों का भाग है। कोयला और पेट्रोल करोड़ों वर्ष पहले के पेडो के परिश्रम के परिणाम हैं, जिनको प्रकृति ने पृथ्वी की बड़ी २ गहरी खानो मे एकत्रित करके छिपा रक्खा था, और जिनको मनुष्य की बुद्धि और पराक्रम ने ढूँढ निकाला। इन खनिजों के स्वरूप मे हम करोड़ो वर्ष पहले पृथ्वी पर आई, चंचल सूर्य्य किरणो का, जिनको वनस्पतियो ने प्रति पल, महीनों, सालों और शताब्दियों पर्यन्त बन्दी बनाकर एकत्रित किया था, प्रयोग कर रहे है, जब कभी हम किसी मशीन को चलते हुए या रेलगाडी, मोटर जहाज या विमान इत्यादि को दिशान्तर को वेगपूर्वक से हड़पते हुए देखते है हम वस्तुतः लाखों और अरबों साल पहले की सूर्य्य किरणों का रहस्य देखते हैं। यह वनस्पतियो की क्रियाओं ही द्वारा सभव है और इसलिए यथार्थतः पेड-पौधे मनुष्य जाति की सारी सभ्यता प्रतिभा, पराक्रम और प्रभाव का कारण है।

पहले बताई हुई बातो के अतिरिक्त बहुत सी और ऐसी बाते है जिनका मूल कारण पेड पौधे ही हैं पर उल्लेख करने के लिए यह स्थान नहीं है। सक्षेप मे वनस्पतियों से प्राप्त उन कुछ मुख्य २ पदार्थों की सूची दी जाती है जो मनुष्य के व्यवहार मे अधिकतर आती हैं :—

तंतु या रेशे (Fibres)	जड़ी बूटी (दवाइयाँ)	इस प्रकार की सैकड़ों
काग (Cork)	मसाले	और चीज़ों के नाम
रंग	चाय	दिये जा सकते है जो
रबड़	काफी	हर रोज काम मे आती
गटापर्चा	कोको	हैं पर उसकी आवश्य-
राल	विटामिन (Vitamins)	कता नहीं जान पड़ती।
गोंद	शराब	
मोम	इत्र, सुगध	
चीनी	साबुन	
स्टार्च	तेल	
सेलुलोज	मेवे	
शहद	लाख	

इनके अतिरिक्त वनस्पतियो के सम्बन्ध की कुछ और बाते सक्षेप मे नीचे दी जाती हैं:—

१—जानवरो और मनुष्यो की अनेक बीमारियों का कारण जीवाणु (Bacteria)हैं, जो वनस्पति वर्ग के हैं, जैसे प्लेग, हैज़ा, यक्ष्मा, इत्यादि।

२—पेड पाधो की भी बहुत सी बीमारियाँ जीवाणुये और दूसरे नीचे जाति (Fungi) छत्राक के वनस्पतियो के आक्रमण से होती है जैसे गेहूँ, आलू और बहुत सी फसलो मे कीडे लग जाना—इसके कारण बीवों के बीचे नष्ट हो जाते हैं और करोडो रुपयो के नुकसान के अतिरिक्त कभी २ अकाल भी पड़ जाते है।

३—जीवाणु और (Fungi) छत्राक प्रकृति के सफाई करने वाले (मेहतर) हैं, जब कभी जन्तु और वनस्पति मर जाते हैं, इन्हीं के द्वारा

उनके शरीर धीरे २ विनष्ट होकर उनकी लाशे वायु और पानी बनकर आकाश मे विलीयमान हो जाती है। यह न होते तो शवो का ढेर बढ़ता चला जाता, अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा हो जाती, और ससार मे जीवितो को रहने का स्थान न मिलता।

४—जीवाणुओं की क्रियाओं के कारण भूमि की उपज बढ जाती है इनके द्वारा नाइट्रोजन निग्रहण (Nitrogen Fixation) होता हैं जिससे नाइट्रोजन, गैस, स्वरूप से, जिसका उपयोग पेड़ की जडे कुछ भी नहीं कर सकतीं, खाद बन जाती है।

५—पेड़ पौधे प्रकृति के ट्यूब वेल्स Tube Wells है। यह अपनी जड़ो द्वारा सैकडो मन पानी भूमि के गर्भसे, जो और किसी प्रकार नहीं मिल सकता, शोषण करके नित्य वाष्प रूप मे हवा मे फेंका करते हैं जिससे वायु की आर्द्रता बढ़ती है, जिसका जलवायु और प्राणियो पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है. अधिक आर्द्रता से बादलों के निर्माणित होने मे भी सहायता मिलती है। इसीलिए जगलों के पास वर्षा और स्थानो की अपेक्षा अधिक होती है। अधिक जङ्गलो के कट जाने से वर्षा कम हो जाती है।

६—वनस्पतियो की छाया से भूमि का, सूर्य्य किरणो के कारण, तापक्रम बढने नहीं पाता इससे जमीन की सतह का पानी वाष्प बन कर उड़ने नहीं पाता, नमी बनी रहती है और उसकी उपज घटने नहीं पाती।

७—वनस्पतियो की सकुलता वर्षा के पानी को बह जाने से रोकती है और इससे भूमि की तरी बनी रहती है। पानी के वेग को रोक कर पृथ्वी-तल को कटने से बचाती है।

८—अपनी जडो द्वारा पेड़-पौधे मिट्टी के कणों को बडी प्रबलता से जकडे रहते हैं। इससे पानी के वेग के कारण पृथ्वी-तल को काटने से—जिससे अनेकों प्रकार की हानियाँ हो जाती हैं—जैसे बाढ अकाल बीमारियाँ इत्यादि—

कहते हैं, इसी कारण घास, रेल के पुलों को पानी के बहाव की तीक्ष्णता से बचाने के लिए, उनके बाँधों पर लगाई जाती है।

६—वृक्षों के काष्ठ की भीतरी बनावट से सैकड़ों साल पहले की मौसिम का पता लगाया जा सकता है क्योंकि बाहरी परिस्थिति का वृक्षों की वृद्धि और उनके काष्ठ निर्माण पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। भिन्न २ मौसिम की दशा में यह भिन्न २ प्रकार की होती है। इसके सहारे उस समय के जलवायु का पता लगा लिया गया है जिसका कोई लेख प्रमाण नहीं है। वृक्ष बड़े दीर्घायु होते हैं कोई कोई वृक्ष तो सैकड़ों और हजारों साल जीवित रहते हैं इससे उस प्राचीन काल से अब तक की परिस्थिति की रद्दोबदल का पता लगा लिया जा सकता है।

जो थोड़ा सा बयान पेड़ पौधों के बारे में दिया गया है उससे स्पष्ट हो जायगा कि उनकी कितनी उपयोगिता और उनका कितना महत्त्व सृष्टि की परंपरा में है, मनुष्य जाति तो वृक्षों के ही सहारे टिकी हुई है और उन्हीं के कारण उसकी इतनी उन्नति हुई है, और जो कुछ भविष्य में उन्नति की सम्भावना हो सकती है वह वनस्पतियों द्वारा ही हो सकेगी। उनके दुरुपयोग से मनुष्य की हानि भी हुई है, उनके विनाश और क्षति के कारण, अनेकों फूले फले, हरे-भरे, उन्नति के शिखरों पर चढ़े हुए देश और जातियाँ, जैसे प्राचीन ईरान, रोम, मिश्र मोहनजोदारो, हरप्पा इत्यादि, और उनकी सभ्यता, गुण, ज्ञान, संस्कृत तथा अन्य विद्यायें, ऐसी मटियामेट हुई जैसे कभी रही ही न हों। कई एक देश तो अब मरु-भूमि हो गए हैं जहां एक चिड़िया भी वास नहीं कर सकती।

हम लोग धन्यवाद दे—अरोडा जी को जिन्होने बन्दी जीवन के अवकाश का सद्-उपयोग करके यह पुस्तक-रत्न हमको दिया या उस परिस्थिति को जिसने उनको बन्दी बनाया ? क्योंकि यह तो अरोडा जी ही बता सकेंगे कि क्या वे इस पुस्तक के लिखने का अवकाश अपने साधारण जीवन के अनेक झंझटों मे फँसे रहकर पा सकते थे ? और भी हमारे कई एक नेताओं ने ऐसी ही परिस्थिति मे रहकर बडे-बड़े महत्त्व की पुस्तके लिखी है, और लिख रहे है। क्या किसी को कहने का हक है कि बन्दीगृह का जीवन सर्वथा निःसार व निरर्थक है ?

काशी विश्वविद्यालय,
शिवरात्रि, २००१

नन्दकुमार तिवारी

पौधों की दुनिया

वनस्पति-विज्ञान

वनस्पति-विज्ञान या वृक्षों के अध्ययन ने कई कारणों से हमारे पूर्वजो का ध्यान आकर्पित किया था। सबसे पहला कारण यह था कि वृक्षो और व्यवसाय का घनिष्ट सम्बन्ध था। और व्यापार की अनेक वस्तुये वृक्षों ही की उत्पत्ति थी तथा जिन जहाजो और सवारियो के द्वारा व्यापार की वस्तुओ का आवागमन होता था वे भी काठ ही की बनी थी। अतएव आवश्यक हो गया कि वृक्षो और वृक्ष-जीवन का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाय।

इस बात के पर्याप्त प्रमाण मौजूद है कि भारतवर्ष मे औषधि-शास्त्र, खेती-बारी, बाग-बगीचे और वन-विज्ञान की खूब उन्नति हुई थी। अतः वनस्पति-विज्ञान की भी उन्नति होना अनिवार्य था। इस विज्ञान का नाम वृक्षायुर्वेद या भेषज-विद्या इसलिए पड गया कि अधिकतर औषधिया वृक्षो ही से प्राप्त होती थी। यद्यपि वृक्षायुर्वेद और भेषज-विद्या के कोई विशेष ग्रन्थ आज मौजूद नही है किन्तु प्राचीन ग्रथो मे कुछ शब्द और वाक्य मिलते है जिनसे पता चलता है कि वृक्षो और उनसे सम्बन्धित अनेक क्रियाओ का ज्ञान हमारे पूर्वजों को था। ऐसे शब्दों मे गुल्म वृक्षायुर्वेदज्ञ एक शब्द है जिसका अर्थ है वह वनस्पति वैज्ञानिक जो निम्नलिखित बातो का प्रयोगात्मक ज्ञान रखता हो—बीजों का संग्रह और चयन, भूमि का ज्ञान, बोआई और बीजो के सफलतापूर्वक अकुरित होने की जानकारी, विस्तार और परम्परा उन्नति की कला; जैसे कलम चढ़ाना, कलम करना, पौधो का लगाना, उनका पालन करना, खाद देना, फसलों का चक्र, अनुकूल वायु, आकाश और अन्तरिक्ष विद्या की परिस्थितियों को देखकर बोआई करना, स्वस्थ और

रोगावस्था मे वृक्षों से व्यवहार, वृक्षों का वर्गीकरण और उनकी पहिचान, घरों को स्वस्थ और सुन्दर बनाने के लिए विशेष पौधों का स्थापन करना आदि ।

प्राचीन संस्कृत साहित्य मे फुटकर स्थानो पर वृक्षों, वनस्पतियों, लताओं, पुष्पों और फलों आदि के वर्णन से पता चलता है कि हमारे पूर्वजो को वनस्पति-विज्ञान के प्रत्येक विभाग का ज्ञान था, जैसे—

(१) आकार-शास्त्र (morphology)
(२) अंग-व्यवच्छेद-विद्या (Anatomy)
(३) शरीर-व्यापार विज्ञान या प्राण्योषधि जीवन शास्त्र (Physiology)
(४) जनन-विद्या (Reproduction)
(५) भू वर्गीकरण (Ecology)
(६) वर्गीकरण-विद्या (Taxonomy)
(७) विकाश-विद्या (Evolution)
(८) वंश-विद्या (Heredity)
(९) वनस्पति चमत्कार (Botanical marvels)

आकार-शास्त्र

आकार-शास्त्र के दो भाग किए गए है—एक अंकुरोद्भेद और दूसरा विशेष विवरण । एक वृक्ष का जीवन-इतिहास अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक है कि वह अध्ययन बीज मे प्रारम्भ किया जाय, क्योंकि उसी मे वृक्ष अपनी भ्रूणावस्था मे रहता है । अनुकूल परिस्थितियों मे भ्रूण की जाग्रति ही का नाम अंकुरोद्भेद है । यह नाम उपयुक्त है, क्योंकि अंकुर बीज के आवरण का भेद करके निकलता है और यह क्रिया कुछ विशेष परिस्थितियों मे होती है,

को 'शाखाशिफा' और पतली-पतली तन्तुमय जड़ो को 'शिफा या जटा' कहा है। एक स्थान पर गाठदार जड़ों का भी वर्णन मिलता है। इन शब्दो के प्रयोगो से उनकी क्रियाओ की ओर भी सकेत होता है।

'तुल या विस्तार' के दो भाग किये गये है काड और पर्ण। काड अर्थात् तना या धुरी 'पर्व' और 'पर्व सन्धि' या 'ग्रन्थि' सहित हो सकता है, जिससे पर्ण या पत्ती निकलती है। पौधा 'सकाड' हो सकता है या 'अप्रकाड' या 'स्तम्ब'। शाखाहीन तने को 'स्थानु या शकु' कहा गया है।

पौधो को 'क्षुप' नाम से सम्बोधित किया गया है। पेड़ों की जो शाखाएं एक दूसरे से निकलती जाती है उन्हे शाखा, प्रतिशाखा और उपशाखा नाम दिये गये है। पत्ती की कोमल कली को 'प्रवाल' कहा गया है।

हरी होने के कारण पत्तो का नाम 'पर्ण' पड़ा और जब वह गिर पड़ती है तब उसे 'पत्र' कहा गया है। पत्तिया सवृन्त या 'अवृन्तक' होती है और एक पत्र, द्विपत्र, त्रिपत्र और सप्त पर्ण भी होती है। फूल के तीन उपयुक्त नाम आये हैं जैसे पुष्प प्रसून और सुमन है। अविकसित कली को कलिका और कोरक कहा गया है, विकसित कली को 'मुकुल' और 'कुडमल' कहा गया है, पूर्ण रूप से खिले हुये फूल को 'विकच' और 'स्फुट' नाम दिये गये है। इसी प्रकार फूलो के गुच्छे के लिए 'स्तवक' और 'गुच्छक' और मजरी शब्द का प्रयोग हुआ है। फूल की डण्डी को 'प्रशव-बन्धन' शब्द दिया गया है अर्थात् वह डण्डी जो फूल और फल को मूल-पौधे से बांधती है। पुष्पाच्छादु पुष्पदल पराग, केशर, रेणु आदि शब्दो का प्रयोग भी हुआ है।

इस प्रकार फलो के लिए भी अनेक नाम आये है। कच्चे फल को शलाटु और मासल फल को 'जालक' और 'क्षीरक' कहा गया है, तथा सूखे

फलों को 'वाण' और फली वालों को 'शिम्बी' नाम दिया गया है। फलों को अलग-अलग जातियां करके उनके नाम रक्खे गये हैं जैसे 'आम्र, 'जम्बू', और वैणव (बांस का फल) आदि।

बीजों का वर्णन पूर्ण रूप से किया गया है, और बीज के आवरण को 'बीजकोष' और मीगी को 'शस्य' कहा गया है। बीजों के सम्बन्ध में 'बीजपत्र' और 'बीजदल' शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

भिन्न-भिन्न प्रकार के पौधे माने गये हैं। कमजोर पौधों को "लता, वल्ली और वृतति" कहा गया है। ये दो प्रकार की होती हैं—एक तो वे जो पेड़ों पर चढ़ती हैं और दूसरी वे जो भूमि पर फैलती हैं। वल्ली किसी वृक्ष के तने या थूनी के चारों ओर लिपट जाती है। किसी वृक्ष पर उगने वाले पौधे को 'वृक्षरूह' और परजीवी पौधे को 'वृक्षादनी' कहा गया है। जल में उत्पन्न होनेवाले पौधों को 'जलनीली' और कुकुरमुत्तों को 'छत्र' कहा गया है। सुश्रुतसंहिता में कुकुरमुत्तों के निवास-स्थान दिये हुये हैं। काई के लिए 'शैवाल' शब्द आया है। अन्नों और गन्ने के रोगों का भी वर्णन मिलता है। वनस्पतियों के रोगों में पाले और गेरुई का भी जिक्र आता है। इन सबसे प्रमाणित होता है कि पौधों के अंग अंग का ज्ञान हमारे पूर्वजों को था।

अन्तरङ्ग आकार या अंग-व्यवच्छेद विद्या

शरीर-व्यापार-शास्त्र

वृक्षों का जड़ों के द्वारा जल का शोषण करना और अपने भोज्य पदार्थों को ज्ञात करना तथा वृक्ष-जीवन में हरी पत्तियों का महत्व आदि बातें तो हमारे पूर्वजों को मालूम ही थीं, किन्तु प्राचीन ग्रन्थों में वृक्षों के प्रकाश-युक्त होने की घटना का भी संकेत आया है और उसके लिए ज्योतिष्मती और ज्योतिर्लता शब्द आये हैं।

वृक्ष की बाल्यावस्था, तरुणावस्था और वृद्धावस्था का वर्णन किया गया है। प्रकाश, भोजन और जल वृक्ष की साधारण वृद्धि के लिए आवश्यक हैं, यह बात भी उन्हें मालूम थी। वृक्ष की अधिक से अधिक आयु दस हजार वर्ष की कही गई है और उसकी मृत्यु के कारण अनुपयुक्त भोजन आकस्मिक घटना और रोग बतलाये गये हैं।

जो कुछ अनुकूल है उसकी ओर वृक्षों का आकर्षित होना और जो कुछ प्रतिकूल है उससे विमुख होना, रात्रि को पत्तियाँ सिकोड़ कर वृक्षों के शयन करने की क्षमता, उनका स्पर्श से सुवेधी होना, और पुष्पों का दिन के भिन्न-भिन्न समयों पर खिलने का भी वर्णन किया गया है।

वैदिक काल से ही पौधों को जीवित प्राणी माना गया है। मनु महाराज ने लिखा है कि उनमें सुप्त चेतना होती है और वे दुख-सुख अनुभव करते हैं।

वृक्षों के प्रजनन के जो उपाय आज मालूम हैं वे सब प्राचीन काल के लोगों को ज्ञात थे। विस्तार के प्रसिद्ध उपायों में 'बीजरुह' बीज से, 'मूलज' जड़ से, 'स्कन्धज' कलम से 'स्कन्ध रोपणीय' डण्डी लगाने से (जैसे गन्ना लगाना), 'अग्रबीज', 'पर्णयोनि' पत्ती से (जैसे पेड़ पत्ता) लगाने का वर्णन [illegible] है।

पौधो की योनियो की बात बहुत धुंधली-सी और केवल एक आध स्थान पर मिलती है और केवल केतकी के वर्णन मे नर केतकी को 'सित केतकी, विफला या धूलि पुष्पिका, कहा गया है और मादा केतकी को 'स्वर्ण केतकी' कहा गया है। मालूम ऐसा देता है कि यह बात निरीक्षण करके लिखी गई है।

भारतीय वनस्पति-विज्ञान विशारदो को वृक्षो की श्वसन क्रिया का ज्ञान नही था। किन्तु उन्हे फसलो के चक्कर का पूर्ण ज्ञान था और वे इस बात को भी भली प्रकार जानते थे कि भिन्न-भिन्न फसले बारी-बारी मे लगाने से धरती की दरिद्रता की पूर्ति हो जाती है।

भू-वर्गीकरण

भूमि को तीन श्रेणियो मे बाटा गया था अर्थात् जगल, अनूप, और साधारण। जगल प्रदेश मे विस्तृत खुले हुये मैदान होते है, जहाँ निरन्तर शुष्क वायु चलती है नदी नाले कम होते है, वृक्ष और मरु प्रान्त अधिक होते है।

इस प्रदेश मे खदिर, अरुन, बदरी आदि वृक्षो के पाये जाने का वर्णन आया है।

अनूप प्रदेश मे नदियो की भरमार होती है और वह समुद्र से घिरा रहता है, वहा शीतल वायु बहती है। नदियों के जाल और वर्षा ऋतु के एकत्रित जल के कारण इस प्रदेश को पार करना कठिन होता है। यहा वजुल, हिताल और नारिकेल आदि पौधो का होना लिखा है। अमरकोष मे निम्नलिखित पौधो के बारे मे कहा गया है कि ये केवल जल मे ही उत्पन्न होते है, जैसे सौगन्धिक कल्हार, हल्लक, इन्दीवर, कुमुद, पद्मिनी, कोकनद, वारिपर्णा, मूषिकपर्णा, जलनीली, शैवाल (सिवार)।

साधारण प्रदेश मे दोनो श्रेणियो की लताए, पौधे और वृक्ष पाये जाते हैं और मन्दार, पारिजातिक और सन्तान आदि का नामोल्लेख भी किया गया है।

इन प्रदेशों मे से किसमे कितनी वर्षा होती है इसका वर्णन भी आया है।

वर्गीकरण-विद्या

पौधो का नामकरण वास्तव मे वैज्ञानिक ढग से किया गया है। और कुछ पश्चिमी विद्वानों ने मान लिया है कि यदि पौधो का नामकरण करने वाले पश्चिमी आचार्य Linneus को इस देश की प्राचीन और संस्कृत भाषा मालूम होती तो वह इन्ही नामो को स्वीकार कर लेता।

नामकरण का मुख्य सिद्धान्त इस प्रकार है :—

(१) विशेष सम्बन्ध :—बोधिद्रुम, अशोक, शिवशेखर, यज्ञ दुमुर आदि।

(२) विशेष गुण :—ओषधि-द्रुम, (चकोडिया) अशोघ्न आदि, गृह-उपयोग-वानी, दन्तधावन, लेखन, कारपास (कपास) आदि।

(३) विशेष आकृति :—फेनिल, बहुपाद, चरमिन आदि।

(४) विशेष आकार :—त्रिपत्र, किशपर्णी, पचागुल, हेमपुष्प, शतमूली (सतावर), शतपर्विका आदि।

(५) स्थानीय सम्बन्ध :—सौवीर, चाम्पेय, मागधी, औड्र पुष्प आदि।

(६) परिस्थिति सम्बन्ध :—नदी सर्ज, जलज, मरुवक आदि।

(७) अन्य विशेषताये :—वकुल (मौलसिरी), शीतभीरु, माध्य, शारदी आदि।

प्रत्येक पोधे के लिए केवल एक ही नाम नहीं दिया गया था किन्तु प्राय: प्रत्येक पोधे के दो नाम थे, एक जन साधारण के लिए और दूसरा

औषधि शास्त्र के विद्यार्थियों के लिए जैसे वक्रपुष्प का दूसरा नाम व्रणारि (फोड़े फुंसी का शत्रु) और चित्रबीज (अंडी) का दूसरा नाम वातारि (अर्थात् गठिया का शत्रु) है।

यह तो हुई नामकरण की बात। रहा वर्गीकरण वह तीन मुख्य सिद्धान्तों पर निर्धारित था, अर्थात् उद्भिद्, विरेचनादि, अन्नपानादि ।

(अ) उद्भिदों का विभाजन इस प्रकार है :—

वनस्पति—अर्थात् वे पौधे जिनमें बिना पुष्प के फल उत्पन्न होते हैं।

वानस्पत्य—अर्थात् वे वृक्ष जिनमें फूल और फल लगते हैं।

औषधि—वार्षिक पौधे (फल पकान्त)

वीरुध्लता—वे पौधे जो धरती पर रेंगते हैं (प्रतानिनी) और लिपट जाते हैं (वल्ली)

गुल्म—अर्थात् वे बूटियां जिनके डंठल रसीले होते हैं।

तृण—अर्थात घासें जिनमें बांस भी शामिल है जिन्हें तृणध्वज, अवसान, द्रुम आदि कहा गया है।

शुकधान्य, शमीधान्य, शाकवर्ग, फलवर्ग, हरितवर्ग जैसे आर्द्रक, जम्बीर, (नीबू) (प्याज) पालाण्डु, लाशुन, आहार योगिवर्ग, और इक्षुवर्ग, (गन्ना समूह) । सुश्रुत मे इन्ही को १५ वर्गो मे बाँटा गया है ।

विकास

हिन्दू विचारक पौधो को जीवित प्राणी समझते थे और उन्हे विकास की सीढी पर सबसे निचले डण्डे पर खयाल करते थे । पुराणो मे तो विकास का वर्णन है ही किन्तु उपनिषदो मे भी विकास की बात पाई जाती है । इससे प्रकट होता है कि पाश्चात्य देशों मे विकास का सिद्धान्त मालूम होने के बहुत पहले भारतवासी इससे अवगत थे ।

वंश प्रकृति

वशानुक्रम पर भी हमारे पूर्वजो ने विचार किया था । धन्वन्तरि जी का कहना है कि फलित स्त्री बीज मे सारे अग सम्भावित रूप मे विद्यमान रहते है और वे एक निश्चित क्रम से खुलते है । जिस प्रकार आम के बोर में उसकी गुठली, गूदा और रेशे सम्मिलित रहते है, जो फल के पक जाने पर प्रथक-प्रथक प्रकट होते हें, किन्तु बौर मे नितान्त सूक्ष्म अवस्था मे रहने के कारण पहचाने नही जाते, वही हाल मनुष्य का भी है । चरक और शकर ने भी यही बात कही है जो डारविन के " e ııı, ө " से बिल्कुल मिलती है ।

पौधों का रोग निदान

भारतीय वनस्पति-शास्त्रज्ञो की इस शाखा मे अपनी देन है । और अथर्ववेद काल ही मे यह नियमित ढग से अध्ययन किया जाने लगा था कि पौधो को स्वस्थ्य और रोगी अवस्था में कैसे रखना चाहिए । इस प्राचीन ग्रन्थ मे यह पाया जाता है कि अनिष्ट करने वाले कीडे-मकोडे किस प्रकार अन्न को नष्ट करते हें । अन्य प्राचीन ग्रन्थो मे पाला, गेरुई आदि वनस्पतियो के रोगो और उनके उपचार का जिक्र आया हे । कहीं-कहीं पर वृक्ष-रोगो के लिए नुस्खे

भी मिलते हैं। वृक्षों की चिकित्सा करने वालों ने वृक्षों के बाँझपन को भी एक रोग ही माना है और उसके दूर करने के लिये औषधियाँ भी लिखी हैं। 'उपवन विनोद' का एक पूरा अध्याय इसी विषय से भरा पड़ा है।

वनस्पतियों के चमत्कार

बृहत् संहिता और शार्ङ्गधर पद्धति में पौधों की नई और चमत्कार पूर्ण जातियाँ उत्पन्न करने की सम्भावना का भी संकेत आया है। आधुनिक संसार के समान हमारे पूर्वजों ने कदाचित् सफलता के साथ सुगन्धहीन-पुष्पों को सुगन्धयुक्त बनाने का प्रयत्न किया था। किन्तु रुई के पौधे पर उनका विशेष प्रयोग उनकी एक महान् सफलता थी, जिसके द्वारा उन्होंने लाल, पीली, और नीली रुई उत्पन्न की थी, और यह बात सर्व विख्यात है कि भारत रुई के उद्योग का मूल-स्थान है। एक बात और भी ध्यान देने योग्य है कि हमारे पूर्वजों को वृक्ष-जीवन का इतना ज्ञान था कि वे किसी स्थान के पौधों को देख कर बता देते थे कि अमुक जलहीन प्रदेश में कितना पानी है और इसी से वे वहाँ की वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करते थे। उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों में इस विषय पर कई अध्याय लिखे गये हैं।

कानूनो का ज्ञाता होता था।

यद्यपि हमारे पूर्वजो ने वृक्ष-विज्ञान का पर्याप्त अध्ययन किया था और युरोप मे यह विद्या बहुत पीछे अर्थात् सोल्हवी,शताब्दी मे आरम्भ हुई, किन्तु खेद है कि हमने इस विद्या मे उन्नति करने के बजाय उसे पीछे ढकेल दिया और हमसे पीछे वाले लोग आगे बढ गये। अब फिर प्रकाश की रेखा दिखलाई देने लगी और आशा है कि भविष्य मे हम इस ओर अधिक ध्यान देगे और अपने पूर्वजों की कीर्ति फैलाकर अपना मुख उज्वल करेगे। इस सम्बन्ध में जिन्हे अधिक जानकारी प्राप्त करनी हो वे अध्यापक गिरजा प्रसन्न मजूमदार, एम० एस-सी० वनस्पति विज्ञान विशारद के लेख पढे। वे इस विद्या के पडित है और उन्होने इस विषय पर काफी खोज की है और खूब लिखा भी है।

आधुनिक समय मे भारतीय पौधो का अध्ययन सबसे पहले पुर्तगाल वालो ने किया, क्योकि वे ही सर्वप्रथम यहाँ आये थे। इसके बाद डच लोगो ने और उनके पश्चात् डेन्स लोगो ने यहा के पौधो की खोजबीन की। इस काम मे फ्रास निवासी भी पीछे नही रहे। अंग्रेजो ने इसके भी पीछे इस वृक्ष-विद्या की ओर ध्यान दिया और १७८७ मे राबर्ट किड के प्रयत्न से कलकत्ते का बौटेनिक गार्डन स्थापित हुआ। १८२० मे पौधो का दूसरा केन्द्र सहारनपुर मे खोला गया। इसके पश्चात् मद्रास और पूना मे भी वनस्पतियो के केन्द्र स्थापित हो गये है। हिन्दुस्तानियो मे श्री उपेन्द्र लाल काजीलाल, डा० यदु-गोपाल मुकर्जी, सर्व श्री एन० एन० बनर्जी, के० वी० बोस, एस० एम० हादी, जयकृष्ण, कार्तिकर, कुलकर्णी, नन्दकर्णी और जे० वी० सिंह आदि विद्वानो ने भी इस विषय पर विद्वतापूर्ण लेख लिखे हैं। अब वनस्पति विद्या से प्रेम रखने वालो के ज्ञान विस्तार के लिए काफी सामग्री हो गई है आशा है कुछ लोग उसका उपयोग करेगे।

वृक्ष-जीवन का विकास

बहुत से लोग वनस्पति शास्त्र को एक रोचक विषय नहीं समझते, किन्तु वह उस समय बड़ा रोचक बन जाता है जब हमें मालूम होता है कि उसमें ऐसे विषयों का अध्ययन भी सम्मिलित है जो हमारे प्रतिदिन के व्यवहार में काम आते हैं जैसे 'बिक्टीरिया' (सूक्ष्म कीटाणु) जिससे रोग उत्पन्न होते हैं, खमीर जो गुंधे हुए आटे को "उठा" देता है और पनीर के फाग ये सब पौधे हैं, यद्यपि इनमें पत्तियों और पुष्पों का अभाव है जिन्हें कि हम अपनी परिचित वनस्पतियों में पाते हैं। वृक्ष-जीवन के रहस्यों और चमत्कारों में वे सारी विधियां और उपाय सम्मिलित हैं जिनके द्वारा वृक्ष पृथ्वी और जल-वायु की अपरिपक्व सामग्री से अपना भोजन तैयार करते हैं और सरल रासायनिक पदार्थों को पेचीले द्रव्यों में परिवर्तित कर देते हैं। साथ ही हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि यह विषय इसलिए भी विशेष महत्व का है कि पशु-पक्षी भी अपना भोजन आखिरकार किसी न किसी पौधे ही के द्वारा प्राप्त करते हैं, क्योंकि मांसाहारी भी उन जानवरों को खाते हैं जो घास फूस चर कर निर्वाह करते हैं—जैसे हिरन, खरगोश और कीड़े-मकोड़े पौधों ही पर पलते हैं।

पौधे केवल उसी प्रकार के नहीं होते जैसे कि हम बाग-बगीचों और वन-उपवनों में उत्पन्न होते हुए देखते हैं। सूक्ष्म कीटाणुओं और खमीर के समान फर्न, काई और कुकुरमुत्ते आदि भी ऐसे पौधे होते हैं जिनमें कोई फल-फूल नहीं निकलते, क्योंकि इनमें वृक्ष-जीवन के विकास की उच्च कोटि की परिवृद्धि नहीं हुई है। इनके अतिरिक्त समुद्री खर-पतवार (सी वीड्स) के समान कुछ पौधे ऐसे होते हैं जिनकी जड़ें नहीं होतीं।

कुछ लोग समझते हैं कि पौधे अचल वस्तुएँ हैं जो धरती में अपनी जड़ों के द्वारा स्थिर हैं। किन्तु यह बात सब पौधों के सम्बन्ध में सत्य नहीं है,

क्योंकि अमरबेलि एक ऐसा परोपजीवी है जो दूसरे पौधों पर चढ कर उनका रस चूसता है या 'डाडर जो 'क्लोवस' (विपत्तिपा) को चूस कर पलता है। उसके लिए धरती को छूना आवश्यक नहीं है, क्योंकि वह अन्य पौधों से अपने लिए रस खींच लेता है।

झीलों और नदियों में नन्हे-नन्हे कुछ ऐसे एक-कोषीय पौधे पाये जाते है जो बडे विचित्र और बडे सुन्दर होते है। उदाहरणार्थ Diatoms और Desmids। यद्यपि वे पौधे होते है तथापि वे पानी में इधर-उधर ऐसी स्वतंत्रता से चलते-फिरते है मानो वे जल के छोटे छोटे जीव है।

दूध को खट्टा करने वाले, पनीर को स्वादिष्ट बनाने वाले और मास को दूषित करने वाले सूक्ष्म कीटाणु नन्हे-नन्हे कुकुरमुत्ता वृक्ष-जीवन के बिंदु मात्र होते है। बडे कुकुर मुत्ते तो अनेकानेक प्रकार के होते हैं।

कुकुरमुत्तों में अधिकतर तो खाने योग्य होते ह किन्तु कुछ जहरीले भी होते ह। जो जहरीले होते है उनके तने पर एक छल्ले के आकार की झालर होती ह। खाने योग्य कुकुरमुत्ता का ऊपरी भाग, जिसे उनका फूल कहना चाहिए, खाया जाता है। उनका धरती के भीतर रहने वाला भाग पतले डोरों का एक जाल-सा होता है, जो फूलने के समय एक ही रात में बाहर निकल आता है और उसी दिन उसमें फूल प्रकट हो जाता है। झागों और कुकुरमुत्तों में वृक्षरोग भी हो जाते ह। इनमें से एक रोगी कुकुरमुत्ता बच्चों के गले में 'थ्रश' नामक रोग उत्पन्न कर देता है।

जिस प्रकार कीडे-मकोडे, चूहे और गौरैया आदि चिडियाँ मनुष्य का लाखों रुपयों का नुकसान करती है उसी तरह कुकुर मुत्ते और फफूंदी भी कुछ कम हानि नहीं करती।

हाल ही में कुकुर मुत्तों पर एक पुस्तक निकली है जिसमें इनकी २४००

जातियों का वर्णन है। किन्तु जानकारों का मत है कि
सृष्टि की इससे दस गुनी जातियाँ होती हैं।

पौधों में कोष

जिस प्रकार जंतु-जगत के जीव एक-कोषीय और अनेक-कोषीय होते हैं, उसी तरह पौधों की दुनिया में एक-कोषीय से लेकर अनेक-कोषीय पौधे भी पाये जाते हैं। अब भी ऐसे अनेक नन्हे-नन्हे प्राणी मिलते हैं जो कुछ बातों में पौधों से मिलते-जुलते हैं और कुछ बातें उनमें जानवरों की-सी पाई जाती हैं, अर्थात् जीव-जगत के निम्न स्तर पर पौधों और जंतुओं की दुनियाएँ एक दूसरे में प्रवेश कर जाती हैं। अतः यह मान लेना न्याय-संगत है कि आजकल के दोनों पृथक समूहों का किसी एक ही समान तत्व से प्रादुर्भाव हुआ है और आगे चलकर शीघ्र ही इन दोनों समूहों की विभिन्नता की खाई भिन्न-भिन्न मार्गों पर चलने ही के कारण चौड़ी होती गई। इस बात की पुष्टि लघुतम पौधों और सरलतम जंतुओं की तुलना करने से हो जाती है और हमें दोनों श्रेणियों में पाई जाने वाली समानताएँ और विभिन्नताएँ प्राप्त हो जाती हैं। पानी पर पाई जाने वाली हरी काई का प्रत्येक कण या कोष एक स्वतंत्र पौधा है। इस एक कोषीय पौधे में वे समस्त अंग मौजूद रहते हैं, जैसे सेलूलोज वाला आवरण, जीवन केन्द्र, और क्लोरोफिल नामक हरित पदार्थ, जो एक भीमकाय बरगद या नीम के वृक्ष में पाये जाते हैं।

क्लोरोफिल पौधों को इस योग्य बना देता है कि वे सूर्य-प्रकाश से वह शक्ति प्राप्त कर सकें जिसके द्वारा वे अपना सेन्द्रिय भोजन तैयार करें और इस प्रकार हवा और भूमि से प्राप्त होने वाले निर्जीव निरिन्द्रिय पदार्थों से नवीन प्रोटोप्लाज्म का निर्माण कर लें। जानवरों में से अधिकांश में क्लोरोफिल्म नहीं होता और इसलिए वे निरिन्द्रिय पदार्थों पर जीवन निर्वाह नहीं कर सकते अतः यह

आवश्यक है कि उन्हे अन्य जानवरो और पौधो से प्रोटोप्लाज्म की सामग्री प्राप्त हो। विना पौधो के जन्तु-जीवन असम्भव हो जायेगा, अत पौधों की उपज का मुख्य मूल्य जानवरों के लिए भोजन उत्पन्न करना है।

एक-कोषीय पौधे एक-कोषीय जन्तुओ की तरह विभाजन विधि से वृद्धि करते है। उनमे उच्चकोटि के पौधों और पशुओं की तरह दो विभिन्न योनियाँ नही होती। हा पौधों और जन्तुओं मे इतना अन्तर अवश्य होता है कि पौधा एक स्थान पर स्थिर रहता है और जल तथा वायु उसका भोजन उसके पास पहुँचा देते है। किन्तु प्राय. सभी जानवर अपने भोजन की खोज मे इधर उधर घूम-फिर लेते है और सक्रिय-जीवन व्यतीत करते है।

मानवजाति के कुछ मित्र, और दुर्भाग्य से अनेक महान् शत्रु, वे अनुवीक्षण यत्र द्वारा देखे जाने योग्य एक-कोषीय पौधे होते है जिन्हे 'वेक्टीरिया' कहते है। इनकी वृद्धि बड़े वेग से होती है। कुछ ही घटो मे इनके एक व्यक्ति की सख्या लाखो तक पहुँच जाती है। मित्र तथा उपयोगी 'वेक्टीरिया' का सिरका, पनीर और नेत्रजनीय खाद बनाने मे प्रयोग किया जाता है। किन्तु इनकी शत्रु श्रेणियों मे से कीटाणु (germs) होते है जो क्षय, हैजा, टाइफाइड आदि मारक रोग उत्पन्न करते है और भोजन सामग्री मे अवाछनीय खमीर उत्पन्न कर देते हैं जिनसे भोजन दूषित हो जाता है जैसे वह खमीर जिससे दूध खट्टा हो जाता है। खमीर स्वय एक प्रकार का एक-कोषीय पौधा है।

कुकुरमुत्ते के कुछ उपयोग

कुकुरमुत्ते कीडों को नष्ट करने मे काम आते है। एक कुकुरमुत्ता घरेलू मक्खियों का सहार करता है, दूसरा करमकल्ले को नष्ट करने वाली तितली को

मार डालता है, तीसरा मच्छरो पर आक्रमण करता है और चौथा पतिगों को नष्ट कर देता है। इत्यादि

कुछ के रग बडे चमकीले और सुन्दर होते है और कुछ जातियो मे उनकी लम्बाई २६ इच तक पहुँच जाती है। पाली हुई मछलियो के सिर पर एक प्रकार की फफूदी लग जाती है जो उन्हे मार डालती है। यह जल मे उगने वाले कुकुरमुत्तो का ही एक रूप होता है। पानी मे होने वाले कुकुरमुत्ते वहाँ पर उपस्थित रहने वाली नाइट्रोजन से पोषित होते है और डॉसो के इल्लो, पतिगो के बच्चो और केचुओं की आबादी को प्रोत्साहन देते है, और ये कीडे-मकोडे 'गल्स' आदि अनेक चिडियो को आकर्षित करते है। खमीर यीस्ट कुकुरमुत्ते का ही एक छोटा रूप है। गरमी पाकर खमीर के कोष खिल कर बडी शीघ्रता से बढने लगते है और इसी मे गुधा हुआ आटा फूल जाता है या "उठ" आता है। इन्ही कोषो की सहायता से शकर मे आन्तरिक उबाल उठ कर आसव (आल कोहल) बन जाता है। जिस प्रकार अनेक पौधे अपने आप मे श्वेतसार सग्रह कर लेते है उस प्रकार खमीर नही कर सकता किन्तु 'ग्लाइकोजन' या चर्बी को उसी तरह जमा रखता है जैसे जानवर अपने यकृत मे अपना भोजन एकत्रित रखते है। खमीर की एक विचित्रता और है कि वह शकर के घोल मे बिना आक्सिजन के भी जीवित रह सकता है। वह शक्कर को 'कार्बन डाइआक्साइड', जल और मदिरा में विच्छेद कर देता है। इस क्रिया से उष्णता के रूप मे शक्ति विमुक्त हो जाती है। इसीलिये आन्तरिक उबाल (fermentation) मे तापमान बढ जाता है और उच्च कोट के जीवो के श्वसन (respiration) का स्थान ग्रहण कर लेता है।

होते ह। यदि हम गरम पानी मे किसी टहनी को डुबोकर हवा को बाहर निकलने के लिए बाध्य कर दे, तो वह इन छिद्रो से निकलती हुई हमे दिखलाई देगी। 'क्लोरोफिल' के हरे रजक पदार्थ और धूप की सहायता से वायु के 'कार्बन् डाइ-आक्साइड' से पत्तियाँ श्वेतसार और शकर बनाती है। इस कार्य के लिये उन्हें वायु के ओषजन की आवश्यकता नहीं होती, अत. वे उसे लौटा देती है और इसीलिये प्रकाश के समय पौधो का स्वास्थ्य सम्बन्धी मूल्य होता है।

शरद ऋतु की धूप मे पत्तियो के कारबार के लिये पर्याप्त उष्णता नहीं होती अत. पौधा पत्तियों से मूल्यवान रसायनो को खींच लेता है। क्रमशः पत्तियाँ रग बदलने लगती है। इससे पतझड की प्रथम अवस्था मे पत्तियों पर तरह-तरह के सुन्दर रग दिखलाई देने लगते है और अन्त मे पौधा तने और पत्ती के डण्ठल के बीच मे कार्क के समान कुछ तहे लगा देता है जिससे पत्तियो को पर्याप्त पोषण नहीं पहुँच पाता और वे दुर्बल हो जाती है। इसके पश्चात् तीव्र वायु का झोंका इन दुर्बल् पत्तियो को गिरा देता है और इसी को पतझड कहते है।

पौधों की जड़ों का कार्य

पौधो की जडो की उपमा एक बड़े पम्प से दी जा सकती है, जो इतने दबाव से पौधे के तने मे पानी चढाता है कि पौधा सीधा खडा रहता है। यदि पानी की कमी के कारण यह दबाव कम पड जाता है, तो पौधा मुर्झा जाता है और झुक जाता है। झाडियो और वृक्षो के सदृश्य कुछ बडे पौधो को और अधिक सहायता की आवश्यकता होती है। अत' वे अपने कोषो मे काष्ठीय तन्तुओं (सेल्यूलोज) की अतिरिक्त मात्रा भर लेते है। कुछ पौधे ऐसे होते हैं जो बिना काष्ठीय तनो के अधिक बलवान पौधे पर चढकर अधिक ऊँचाई प्राप्त कर लेते है। इस रीति से लताएँ अपने तने से चिपकने वाली

जड़ो को उत्पन्न करके पेड़ो और दीवालो पर चढ जाती है। ककड़ी और जगली गुलाब की लताएँ अपने अतिथि के चारो ओर अपनी पत्तियो के डण्ठलो को कटिया की तरह फँसा कर ऊपर चढती है। सेम और मटर की बेलो मे सुवेधी तन्तु होते हे जो उनके स्पर्श मे आने वाले प्रत्येक पदार्थ मे लिपट जाते है।

फूल पौधे के विज्ञापन-विभाग का कार्य करता है। उसकी सुन्दर पंखुड़िया और मीठी सुगन्ध कीड़ो को पुष्प के यौन अगो को उर्वरित करने के लिए आकर्षित करती है। कीड़े पुष्प के पुरुष यौन अग से पराग लपेट कर ले जाते हैं और अन्य पौधों के स्त्री-अग मे वितरित कर देते है और इस प्रकार अतर निषेक से उन्हे बचा लेते हैं। पुष्पो पर जो रेखाएँ होती हैं वे उसके रसामृत कुण्ड की ओर कीड़ो का मार्ग प्रदर्शन करती है जहाँ उन्हे स्वतत्र पान का अवसर मिलता है और इसीलिए वे बार-बार वहाँ आते हैं। विशेष पुष्पों को विशेष कीड़े ही फलित करते है। जिन पुष्पों का अमृत कुण्ड गहरा होता है उसमे मधु-मक्खी के समान लम्बी जीभ वाले कीड़े ही पहुँच सकते है क्योकि उनके रोम युक्त शरीर पराग को फैलाने मे बड़े उपयोगी सिद्ध होते है।

कुछ पौधे आत्म-निषेक से बचने के लिए अनेक उपाय किया करते हैं, क्योकि इससे पौधा दुर्बल हो जाता है। घास और सरपत के फूल बड़े सरल रूप के होते हैं। इनमें सुन्दर पंखड़ियाँ नहीं होतीं। ऐसे पौधो के पराग का वितरण वायु पर निर्भर करता है और इन्हे कीड़ो को आकर्षित करने के लिए किसी विज्ञापन का सहारा नहीं लेना पड़ता। गरमी मे जब घासे पक जातीं है तब उनके फूल अपने अपने सिर झुका लेते है ताकि चरने वाले पशु उन्हे खाकर सफाचट्ट न कर दें।

कुछ पौधे पुष्पहीन होते है। इनमें बीज के बजाय जीवाण्ड (स्पोर्स) होते है जो बढकर नए पौधे बन जाते है। कीट-डिम्बो की तरह इन जीवाण्डों मे तरुण पौधे का प्रति-रूप उत्पन्न करने की शक्ति नहीं होती। ये एक प्रकार की अर्धावस्था उत्पन्न करते है जिसे पूर्ण तरुणावस्था प्राप्त करने के लिए और अधिक भोजन सोखने की आवश्यकता रहती है। काई और कुकुरमुत्ते की जनन-क्रिया तो और भी अधिक प्राथमिक होती है। अत' अब हम समझ सकते है कि वनस्पति शास्त्रियों ने पौधो का वर्गीकरण पुष्प-युक्त और पुष्प-हीन पौधों मे क्यो किया है?

कीड़ों पर निर्वाह करने वाले पौधे

कुछ पौधे मासाहारी होते है जो अपने भोजन के लिए कोट-पतगो को पकड लेते है। इनमें कुछ की पत्तियो मे लसलसापन होता है जिन मे कीडे-मकोडे चिपक जाते है और कुछ मे चूहेदानी के समान एक अनोखा फन्दा होता है जिसमे फॅस कर कीडे निकल नहीं पाते। कुछ देर पश्चात् पौधा उन्हे सात्म,कर लेता है। कुछ पौधे परोपजीवी होते है जो दूसरे पौधो पर निर्वाह करते है और उन्हे स्वय अपना भोजन तैयार करने की आवश्यकना नहीं पडती।

अधिकतर पौधे प्रकाश की ओर ही बढते है। इसका अनुभव एक गमले को किसी खिडकी मे रख कर किया जा सकता है। किन्तु कुछ पौधे इस बात का अपवाद होते है और वे प्रकाश की ओर उगने की अपेक्षा अँधेरी दराजो की खोज मे रहते है और उसी ओर अपनी शाखाओं को पहुँचाते है ओर वहां अँधेरे मे अपने बीज गिरा देते है जिसमे अगले साल वे वहीं उगें।

एक प्रकृति-प्रेमी के साथ किसी उद्यान मे जाने पर अनेक ऐसी चमत्कारिक बाते मालूम होगी जो बगीचों मे साधारण घूमने वालो को नहीं

दिखाई देतीं। उदाहरणार्थ एक पोस्ते की बोडी को ले लीजिये। यह एक फुट लम्बी चौडी भूमि पर ६००० बीज गिरा देती है जो एक ही साथ अकुरित होते है।

'सन रोज़' का पौधा भी अपने सारे बीज एक ही बार मे गिरा देता है किन्तु उसके अंकुरो मे तीन विभिन्न अवस्थायें प्रकट होती है जिनके बीजो के अकुरोद्भेद मे दो-दो मास का अन्तर होता है। इसका कारण कदाचित् यह होता है कि यदि सब बीज एक साथ उग आये और घटनावश पाला-पानी से नष्ट हो जाये, तो सब का नाश हो जाये। अतः कुछ बीजो के देर से उगने में यह डर नही रहता।

कुछ बीजों की यह विचित्रता होती है कि उनमे ३०० से ४०० वर्ष तक उपजाऊ शक्ति बनी रहती है किन्तु गेहूँ की उपजाऊ शक्ति २५ वर्ष से अधिक प्रच्छन्न नही रह सकती और अधिकतर बीजो की अकुरित होने की शक्ति ७ वर्ष के पश्चात् नष्ट हो जाती है। इस समय उनके तन्तु छिन्न-भिन्न होने लगते हैं और अकुरोदद होना असम्भव हो जाता है।

जब हमारे पौधे उगने लगते है तब और भी चमत्कार प्रकट होते है। कुछ पौधे उगने में अत्यन्त शक्ति का परिचय देते है और कडी से कड़ी भूमि पर उग आते है जैसे—colt's foot और कुकुरमुत्ता। कुछ पौधे साधारण कड़ी भूमि मे उगते है। उनकी रचना उनकी आवश्यकता के अनुकूल होती है। चूँकि उनको कडी भूमि का भेदन करना होता है अतः उनके अकुरो के सिरे बर्छी के सामान होते हैं जिससे वे सरलतापूर्वक कड़ी भूमि का छेदन कर के बाहर निकल आते है जैसे घाटी की कुमुदिनी और पीला नरगिस। यहाँ पर हमें जीव-जगत की लडी से सम्बन्धित करने वाली एक कडी दिखलाई देती है, क्योकि यही कारण है कि मुर्गी के बच्चे की चोंच का अग्रभाग कटोर होता है जिससे वह अडे का आवरण छेद कर बाहर निकल आता है।

समस्त अंकुरों के अग्रभाग कठोर नहीं होते बल्कि उनकी नोकें कोमल होती हैं। किन्तु भूमि से बाहर निकलते समय वे झुकी रहती हैं और इस प्रकार उनके टूट जाने का डर कम रहता है। जब एक बार वे प्रकाश में आ गये तो वे सीधे हो जाते हैं। इसका उदाहरण मटर है। किंतु मकाई के अंकुर सीधे होते हैं और उनके सिरों पर एक कवच-सा चढ़ा रहता है जो उनकी रक्षा करता है।

नये पौधे उपजाना

बाग बगीचों से प्रेम रखने वालों को यह बात मालूम है कि विभिन्न प्रकार के परागों का चमन कर के कुछ पौधों की नई जातियाँ उत्पन्न की जा सकती हैं। नई जातियाँ एक पेड़ की कलम दूसरे पर चढ़ा कर भी उत्पन्न की जा सकती हैं। एक जाति के अनेक प्रकार के रूप उत्पन्न करना तो आसान है किन्तु पौधों की ऐसी बिलकुल नई जातियाँ उत्पन्न करना, जो अनेक दोगलों की तरह अनुपजाऊ न हों, वनिस्पति-शास्त्र के विशेषज्ञों का ही काम है। किन्तु आधुनिक वनस्पति विद्या ने ऐसी उन्नति कर ली है कि ऐसा करना सम्भव हो गया है और यह उसके चमत्कारों में से केवल एक चमत्कार है। वनस्पति विद्या विशारदों का कहना है कि पुराने अनुपजाऊ दोगलों से नई जाति के पौधे 'क्रोमोजाम' की संख्या दूनी कर देने से उत्पन्न किये जा सकते हैं। ये 'क्रोमोज़म' लम्बे आकार की रचनाएं होते हैं जो बीज। कोषों के केन्द्रों में पाये जाते हैं और उनमें वंश प्रकृति के अंश होते हैं। यौन कोषों में जब एक ही प्रकार के दो 'क्रोमोजोम' संयोग से संयुक्त हो जाते हैं तो फलित उत्पत्ति होती है और विभिन्न प्रकार के 'क्रोमोजोम' के संयोग से अनुपजाऊ दोगलों की उत्पत्ति होती है।

वृक्ष-जीवन की दूसरी आश्चर्यजनक घटना यह होती है कि कुछ सुगन्धित पौधे अपनी सुगन्ध खो देते हैं। अधिकतर घरेलू पौधों में अपनी पूर्वावस्था

को लौट जाने की प्रवृत्ति होती है। और यह घटना उस समय बहुधा होती है जब उनकी देख-भाल मे कमी होने के कारण वे अपने जगली पूर्वजों से समली-कृत हो जाते है।

श्वेतसार के रूप मे पौधा अपने भोजन को एकत्रित किए रखता है। यदि आलू को हम 'आयोडीन' से स्पर्श कर दे तो हमे श्वेतसार की उपस्थिति तुरन्त मालूम हो जायेगी क्योकि उसका रग गहरा बैजनी-नीला (Purplish blue) हो जायेगा। कारण यह है कि श्वेतसार पर 'आयोडीन' की ऐसी ही रासायनिक क्रिया होती है। यदि किसी पत्ती मे हम श्वेतसार की परीक्षा करें, तो हमे मालूम होगा कि वह केवल हरी पत्ती मे ही उपस्थित रहता है। इसका कारण यह है कि श्वेतसार की रचना करने के लिए हरा रग उत्पन्न करने वाले पदार्थ अर्थात् क्लोरोफिल की आवश्यकता होती है। पौधा अपने श्वेतसार को प्रवर्तक के प्रयोग से शर्करा मे परिवर्तित कर लेता है। यदि हम गेहू की रोटी का एक टुकड़ा अपने मुंह मे रक्खे, तो मुंह की लार प्रवर्तक कार्य करती है और हमें मालूम हो जाता है कि जैसे-जैसे श्वेतसार शकर मे परिवर्तित होता जाता है वैसे-वैसे क्रमशः उसका स्वाद मीठा होता जाता है।

प्रयोग करके यह प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है कि पौधे सास लेने में पानी की भाप निकालते है और यह क्रिया गरम ऋतु और तेज़ हवा के मौसम मे अधिक होती है। इसी तरह प्रयोग से यह भी दिखलाया जा सकता है कि सास लेते समय पौधे उसी प्रकार 'कार्बन डाइआक्साइड' बाहर निकालते हैं जिस प्रकार पशुपक्षी करते हैं। साथ ही यह भी प्रत्यक्ष दिखलाया जा सकता है कि प्रकाश मे ओषजन प्रदान कर के पौधे अपनी स्वास्थ्यदायक उपयोगिता का परिचय देते हैं।

जब पौधा अपनी पत्तियों के श्वेतसार के शकर मे परिवर्तित कर लेता है, तब वह उसे वृक्ष के तने मे या अन्य किसी खजाने मे भेज देता है। वैज्ञानिक प्रयोगो से यह भी प्रमाणित हो गया है कि पौधा अपनी श्वसन क्रिया से उष्णता उत्पन्न करता है। और यह बात थर्मामेटर के प्रयोग से देखी जा सकती है कि पुष्प के अन्दर की गरमी और पौधे के आस पास की गर्मी मे दो डिगरी का अन्तर होता है। अनेक कुतूहलपूर्ण प्रयोगो से यह दिखला दिया गया है कि पौधो मे हृदय स्पन्दन भी होता है।

गाँठ और कन्द

बहुत कम लोग है जो गाठ और कन्द का भेद जानते हैं। जैसे, प्याज एक गाठ है। इसके भीतर एक मासल पत्तियाँ होती है जिनमे श्वेतसार एकत्रित रहता है। इसकी पेंदी मे एक छोटा सा तना होता है जिससे जडे निकलती है और इन्ही जडो से नए पौधे उग कर गाठ की मासल पत्तियो से श्वेतसार ग्रहण करते है। किन्तु कन्द एक मोटा तना होता है जिनमे कडा श्वेतसार भरा रहता है। यह श्वेतसार आधार-तने मे होता है पत्तियो मे नही। आलू एक फूला तना है और उसमे जो आखे होती है वे ही किल्ले फूटने के बिन्दु होते है जहा से नवीन पौधे उत्पन्न होते है। बीजो के अतिरिक्त अन्य कई उत्पत्ति स्थानो से नये पौधे उग सकते है जैसे कुछ पौधो की प्रत्येक पत्ती के किनारे पर नन्हे-नन्हे विचित्र कुब्बे से होते है। ये गिर जाते है और जड पकड लेते है। इन्हीं से नये पौधे उगते है। कुछ पौधे ऐसे होते है जिनके रेशो से जडे निकलती है और ज्योही वे धरती के सम्पर्क मे आती है त्योही नये पौधो को जन्म देती है। कुछ पौधे ऐसे होते है जो अपनी लम्बी लताओ को ग्रीष्म ऋतु मे बहुत दूर तक जमीन पर फैला देते है। वहा जाकर ये जम जाती है और अपना सिरा जमीन के भीतर ढक लेती हैं। अगले साल इन्हीं से नये पौधे

निकल आते है। कुछ पौधों को काट कर अलग उनकी कलम लगा दी जाती है और नया पौधा उत्पन्न हो जाता है और कुछ को काट कर दूसरे पौधों पर पैबन्द बांधा जाता तथा कुछ पर कलम चढ़ाई जाती है।

पुष्पों के विभिन्न प्रकार

कुछ पौधे शाम या रात ही को पुष्पित होते हैं जैसे बेला, चमेली, रजनी-गन्धा आदि। रात को उड़ने वाले पतिंगे इन्हें उर्वरित करते हैं। इनका रंग आमतौर से सफेद होता है और इनमें उच्च कोटि की सुगन्ध होती है जिसके द्वारा अन्धेरे में भी कीड़े आकर्षित हो जाते हैं। यह भी एक बड़ी विचित्र बात है कि नीले रंग का कदाचित् ही कोई ऐसा पुष्प होता है जिसमें सुगन्ध होती है। गुलाब को छोड़ कर मधुर सुगन्ध वाले अधिकतर पुष्प सफेद होते हैं।

दिन में खिलने वाले फूलों में सब के खिलने का समय एक ही नहीं होता। कुछ फूल सवेरे से शाम तक खिले रहते हैं और कुछ की पखुड़ियां दोपहर के पश्चात बन्द हो जाती हैं और कुछ दोपहर के पहले ही मुंद जाते हैं। कमल तो सूर्योदय पर खिलता है और सूर्यास्त पर बन्द हो जाता है।

'होलीबुश' और गोखरू आदि के काँटे चरने वाले जानवरों से पौधे की रक्षा करने के लिए होते है। सर्वदा हरी रहने वाली झाडी की चोटी की पत्तियो मे काँटे नहीं होते क्योकि वे चरने वाले पशुओ की पहुँच से बाहर होती है। इस प्रकार हम देखते है कि जानवरो के समान पौधे भी अपनी परिस्थिति के अनुकूल अपनी रचना कर लेते है। इसी नियम के अनुसार जल में उपजने वाले पौधो मे उनकी स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की पत्तियाँ, डण्ठल और रेशे होते हे, जो पानी की अधिकता से उनकी रक्षा करते हे और उन्हे सड़ने, गलने और बह जाने से बचाकर वृद्धि करने का अवसर देते है। पौधो की रक्षा ही लिए दल-दल मे उत्पन्न होने वाले 'सैज' नामक पौधे का तना तीन कोने का होता है ताकि वह पानी को काटता रहे और बहता हुआ पानी उसे उखाड न फेंके। इसके विरुद्ध स्थिर पानी के दलदल मे उगने वाले सरहरी या सेवार (Rushes) का डण्ठल करीब-करीब गोल होता है क्योंकि उसको पानी चीरने की आवश्यकता नहीं होती।

पौधो की रचना में चकित करने वाली वे विचित्र ग्रन्थियाँ या गुल्म होते है जो मटर या सेम के समान अनेक पौधो की जड़ों पर होते हैं। ये गाँठें एक प्रकार की कोठरियाँ होती है जिनमें पौधा कीटाणुओं को पालता है और उनकी रक्षा करता है। ये कीटाणु धरती के 'नेत्र-जनिक' पदार्थ को अधिक उपयोगी बनाते हैं और पौधा इससे लाभ उठाता है।

बीज वितरण

अधिकतर रसदार छोटे-छोटे गोल फल सुन्दर रगो के होते है। इसका कारण है। यदि उनके सब बीज पौधे के आस-पास ही गिर जाये, तो वे उगकर मुख्य पौधे का गला घोट दे। अतः उनका वितरित होना आवश्यक है।

इसीलिए सुन्दर रगो के फल पक्षियो से लिये आकर्षण की वस्तु बन जाते है। पक्षी उन्हे खाकर और बीज के गूदेदार आवरण को पचाकर मूल बीज को अपनी आँतो मे ले जाते हैं। वहाँ से बिना चोट खाये हुये वह मीलो दूर पर जाकर गिरता है जहाँ कि पक्षी उड़कर जाता है। लाल रग तूती को बहुत पसन्द है अतः वह लाल रगो के फलो को खूब खाती है। फलो मे लाल रग के पश्चात पीला और नारगी रग अधिकतर पाया जाता है और इन्हे भी खाने वाली अनेक चिड़ियाँ होती है।

बीजो के वितरण के लिए सभी पौधे पक्षियो पर आश्रित नही रहते। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए और भी अनेक ढग होते है। जिनका वर्णन आगे "बीजो की यात्रा" मे मिलेगा। Dandelion और Sow thistle के रोयेंदार बीज हवा के द्वारा वितरित होते है, Goose Grass, Enchanter's night shade और Burdock के हुकदार बीज जीवधारियो के अगो से चिपक कर यात्रा करते है, नारियल और कमल के समान पानी मे उतराने वाले बीज पर्याप्त दूर तक चले जाते है। चिड़ियो के पैरो मे लगी हुई मिट्टी भी बीजो को दूर तक ले जाने में बडी सहायता करती है।

पुष्पों की आत्म-रक्षा

फूलो मे अपनी आत्म रक्षा के लिए अनेक साधन होते है, जैसे 'फाक्स ग्लोव' के फूल बाहर की ओर झुके हुये रोगो से ढके रहते है ताकि पौधा— जूँ के समान रेगने वाले अवाञ्छित कीडे उनमे घुस कर बिना पराग मिश्रण किए हुए रसामृत को चुरा न ले जाये। इसी प्रकार मनोहर 'बैग बीन' पुष्प की पखडियो पर इतने घने रोम होते है कि चोर कीड़े उनके अमृत-कुण्ड से दूर ही रहते है।

उद्यान के खर-पतवारो मे सबसे अधिक साधारण रूप से मिलने वाले 'चिक वीड' के डण्ठल मे बालो की दो समानान्तर रेखाये होती है जो प्रत्येक ग्रन्थि पर बारी-बारी से अपना स्थान बदलती रहती है, जिनके द्वारा पत्तियो पर जमा होने वाला वर्षा का जल जडो तक पहुँच जाता है। गुलाब और 'हॉप' नामक लता के फूलो की डण्डी पर एक लसदार पदार्थ होता है जो अवाछित कीडो को फॉस लेता है। 'सन ड्यू' के लसदार बालो मे मक्खियाँ तथा अन्य कीडे चिपककर रह जाते है और इनके मृत शरीरो से 'सनड्यू' पौधे को नेत्रजनिक भोजन मिलता है।

बहुत से जलीय पौधो मे वायु-कोष होते हैं जिनकी सहायता से वे सीधे रहते है जैसे कमल की पुष्पनाल।

खाद

कीटाणु धरती के लिए बडे उपयोगी होते है, क्योंकि वे नेत्रजनिक पदार्थो की वृद्धि करते हैं और नेत्रजन पौधों की उपज के लिए आवश्यक है। इसी-लिए जानवर जमीन मे गाडे जाते है ताकि वे सड कर कीटाणुओं की वृद्धि करे। जानवरो की ताजी खाद मे पेड नही लगाना चाहिये, क्योकि ताजी पशु-खाद मे 'अमोनिया' की मात्रा अधिक होती है—और यही हाल गोबर की ताजी खाद का भी होता है। अतः पौधे लगाने के लिए खूब सडी हुई खाद का प्रयोग करना चाहिए। जिस भूमि मे अम्लता अधिक हो उसको शक्तिहीन करने और उसमे मिठास उत्पन्न करने के लिए थोडा सा चूना भी मिला देना चाहिए। आलू के समान कुछ पौधे अधिक चूना सहन नहीं कर सकते किन्तु अन्य अनेक पौधे काफी चूना पसन्द करते है। मन्द-गत पौधों को उत्तेजित करने के लिए कभी-कभी हमे खाद मे चूने का 'फास्फेट' भी मिलाना पडता है या विकास की पूर्णता के लिए 'सूड'

जल देना पड़ता है। वृक्ष जीवन के लिए नेत्रजन, स्फुर और पोटाश तीन रासायनिक पदार्थ बड़े आवश्यक होते हैं। नेत्रजनिक खाद पौधे की पत्तियों, टहनियों और हरे अंगों को उगाने में मुख्यतः उपयोगी होती है। नाइट्रेट-आफ़ सोडा, सल्फेट आफ अमोनिया और 'सूड' धरती के नेत्रजन की वृद्धि करते हैं। स्फुर मिश्रित खाद पौधों के फूल और फलों की उन्नति करती है, किन्तु उसकी गति मन्द होने के कारण उसका प्रयोग ऋतु के आरम्भ में ही हड्डी का भोजन देकर किया जाता है। पोटाश मिश्रित खाद से कार्बनहाइड्रेट की रचना और उसके आवागमन पर प्रभाव पड़ता है और यही वृक्ष का मुख्य भोजन होता है। इस खाद का प्रयोग लकड़ी की राख, सल्फेट आफ पोटाश और अन्य पोटाश-लवणों के द्वारा होता है। खादों के द्वारा भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने के सम्बन्ध में विज्ञान ने लोगों की इतनी ज्ञान वृद्धि कर दी है कि जहाँ पहले घास का एक तिनका उत्पन्न होता था वहाँ अब दस तिनके होते हैं।

बड़े से बड़े और छोटे से छोटे पौधे

पेड़ों की दुनिया का बहुत बड़ा चमत्कार यह है कि यदि एक ओर सुई की नोक के समान इतना नन्हा पौधा होता है कि वह अनुवीक्षण यंत्र से दिखाई देता है, तो दूसरी ओर देवदार के १०० फुट से भी अधिक ऊँचे विशाल-काय वृक्ष होते हैं। मेक्सिको के sequoia वृक्ष ४००० वर्ष तक के पुराने मौजूद हैं जिनमें से आज के धड़ का घेरा १०० फुट से भी अधिक है। इनमें से एक की ऊँचाई ४५० फुट है। मेक्सिको के 'टूले' नामक स्थान पर संसार का सबसे बड़ा सरो (cypress) का वृक्ष है जिसके धड़ का घेरा १५४ फुट है है अर्थात् इस विशाल वृक्ष के धड़ को नापने के लिए २० आदमियों को अपने दोनों हाथ फैला कर खड़े होना होगा। शाहबलूत के वृक्ष की आयु

२००० वर्ष की होती है। और कोई कोई २००० वर्ष तक पहुँच जाते हैं। 'ऐश' और 'बीच' के वृक्ष ३०० वर्ष से अधिक आयु नहीं प्राप्त कर पाते किन्तु नीबू का वृक्ष १००० वर्ष से भी आगे बढ जाता है। यदि सिरपेचे की लता ४५० वर्ष तक जीवित रहती है और बबूल का वृक्ष ५७० वर्ष तक पहुँचता है तो देवदार का पेड ८०० वर्ष की आयु प्राप्त करता है।

वृक्ष का अंग-व्यवच्छेद

पौधों की लाखों जातियाँ हैं और उन्हीं में दो लाख फूलवाले पौधे भी शामिल हैं। वनस्पति वैज्ञानिकों ने उच्च कोटि के वृक्षों का वर्गीकरण उनके फूलों की बनावट के अनुसार किया है। वृक्षों का अंग-व्यवच्छेद करने से हमें मालूम होता है कि उसके धड़ में निश्चित छल्ले-से होते हैं। पेड के बाहरी ओर जल से उसकी रक्षा करने के लिये एक तह छाल की होती है, उसके नीचे एक पतला स्तर भोजन-परिचालन करने वाले कोषों का होता है जिसे "कॉरटैक्स कहते हैं। इसके नीचे और भीतर की ओर एक कठोर काष्ठीय स्तर होता है जिसमें कोमल और रस-वाहक कोष होते हैं जो अधिक दबाव के जोर से जडों से जल खींचते हैं। यह पानी उस क्षति की पूर्ति करता है जो पत्तियों के जल के शीघ्र समाप्त होने से उत्पन्न होती है। ये पत्तियाँ संख्या में विभिन्न वृक्षों के प्रकारानुसार न्यूनाधिक होती हैं। यदि कुछ पेडों में केवल सौ दो सौ पत्तियाँ ही होती हैं, तो कुछ में ४ करोड तक होती हैं। चीड के पेड में सब से अधिक पत्तियाँ देखी गई हैं। उसी में करोडों पत्तियाँ वैज्ञानिकों ने गिनी हैं। भोजपत्र में भी दो लाख पत्तियाँ तक देखी गई हैं। अत पौधे की जाति और आकार के अनुसार जितनी पत्तियों की उसे जरूरत होती है उतनी ही वे होती हैं। अधिकतर पेडों में पत्तियों की संख्या पर्याप्त और अधिक ही होती हैं।

फूलों की प्राचीनता

विद्वानों का मत है कि पहले पहल फूलवाले पौधो का दर्शन १४ करोड वर्ष हुये तब हुआ था। इसके पश्चात् उनकी पराग-केसर वायु द्वारा नारी पुष्पों तक पहुँचाई गई।

जब प्लेन (Plane) शाहबलूत, अखरोट और सरपत के पेडो का बीज-मिश्रण कपूर और अनाज उत्पन्न करने वाले अन्तरदेशीय पौधो से हुआ तब जन्तु-जगत मे मधु-मक्खियाँ प्रकट हुई, जिन्हें अपना भोजन पुष्पो के पराग और रसामृत से प्राप्त हुआ और उन्होंने इधर-उधर आ-जाकर एक फूल से दूसरे के पराग को स्थानान्तरित किया और इस प्रकार बीजो की उत्पत्ति हुई। खोजी लोगो ने पता लगा कर यह निश्चय किया है कि गेहूँ, जौ और मटर पहले ईसा से ५५०० वर्ष पूर्व लगाये गये थे। इन्ही विद्वानो का मत है कि चमेली वर्मा का मूल पोधा है और सूरजमुखी केनाडा का, करमकल्ला सारे ससार मे मिश्र देश से फैला है।

प्राचीनतम वृक्ष—

जर्मनी मे १२०० वर्ष पुराना एक नीबू का वृक्ष है। रूगन टापू मे नाशपाती का एक वृक्ष १००० वर्ष का है।

सब से ऊँचा वृक्ष—

आस्ट्रेलिया मे 'लैट्रोव' नदी के किनारे 'यूक्लिपटस' का एक वृक्ष है जो ५५८ फिट ऊँचा है। कलकत्ते के बॉटोनिक गार्डन मे बरगद का एक वृक्ष है जिसका घेरा १३ फुट है और उसमे ३००० छोटे छोटे अन्य तने है वह १०० वर्ष का पुराना है।

छप्पर के समान पत्तिया—

'टैलीपैट पाम' की पत्तियाँ इतनी बडी होती है कि उन्हे छाते के

रूप मे इस्तेमाल किया जाता है। ये पत्तियाँ छप्परों के रूप मे भी प्रयोग की जाती हैं।

बाग लगाने को कला—

बाग लगाने की कला अत्यन्त उन्नत सभ्यता की उत्पत्ति है, वह शान्ति के वातावरण मे वृद्धि करती है और तूफानी काल मे नष्ट हो जाती है। सबसे प्राचीन बाग जो आज भी विद्यमान है वह है मिश्र देश के टलल अर्मन मे और ईसा के १५०० वर्ष पहले का है। बेबलन के 'लटकनेवाले उद्यान' प्राचीन ससार के सात आश्चर्यों मे से एक है। इनमे बड़े सुन्दर फूल, झाड़ियाँ और वृक्ष है। विश्वास किया जाता है कि ये ईसा से ६६० वर्ष पूर्व के हैं। अरब लोग बाग लगाने की कला को हिन्दुस्तान से स्पेन ले गये थे।

कुटिया के पास वृक्ष—

मुनि लोग अपनी कुटिया के आस-पास औषधियो के पौधे लगा दिया करते थे। औषधियो के ये बाग धीरे-धीरे 'बोटैनिकल' उद्यान बन गये, जहाँ पौधो का अध्ययन वैज्ञानिक रूप से होने लगा।

तैरते हुए बाग—

काश्मीर और मैक्सिको मे तैरते हुये बाग पाये जाते हैं, जिनमे से कुछ में तरकारी बोई जाती है और कुछ मे केवल फूल।

राष्ट्रीय चिन्ह—

प्रत्येक देश का कोई न कोई विशेष पुष्प उसका राष्ट्रीय चिह्न होता है।

जगली फूल—

जंगली फूलों की शोभा भी निराली होती है।

पौधों की अधिकता—

अफरीका मे 'भूमध्यरेखा' के आस-पास सब से अधिक पौधों की

जातिया पाई जाती है जो लगभग ३०००० के मिल चुकी हं।

पेड़ो की आयु—

नाशपाती का वृक्ष ३०० वर्ष तक रहता है, सेव का १५० वर्ष, अजीर का पेड़ भी काफी दिन जिन्दा रहता है और नारगी का ८० वर्ष तक।

संख्यातीत पुष्प—

केलीफोरनिया मे एक गुलाब के पौधे से एक गरमी की ऋतु मे २१००० पुष्प प्राप्त हुये। मलाया का 'रैफलेसिया' नामक पुष्प ससार मे सबसे बड़ा फूल होता है जो आर-पार एक गज का होता है।

बड़ा बाग—

सयुक्त देश अमरीका मे पूर्वी किनारे की रियासतो को तूफान से बचाने के लिए एक ससार का सब से बड़ा बाग लगाया जा रहा है जिसमे भिन्न-भिन्न जातियो के तीन करोड़ वृक्ष होगे।

वृक्षों का जीवन

वृक्ष जीवित वस्तुए है जो सांस लेते है, खाते है, वृद्धि करते है और अपने समान दूसरे वृक्ष उत्पन्न करते हैं। किन्तु इन सारी कार्यवाहियो के होने के लिए कुछ परिस्थितियो की आवश्यकता होती है। इसके पहिले कि एक बीज उगकर जीवन प्रदर्शित करे यह आवश्यक है कि उसे वायु और जल मिले।

तीन आवश्यक वस्तुयें

जिस समय मूल वृक्ष अपने बीज छितरा देता है या उन्हे जमा कर लिया जाता है उसके पश्चात् सारे बीजो के लिए यह आवश्यक है कि उन्हे कुछ समय के लिए विश्राम मिले। थोड़े दिन बाद वे उगने के लिए तैयार

हो जायेगे। उस समय सबसे प्रथम वस्तु जिसकी उन्हें आवश्यकता होगी वह है हवा। दूसरी वस्तु जो बीजो को चाहिए वह है गरमी। भिन्न-भिन्न बीजो को भिन्न-भिन्न तापमान की आवश्यकता पडती है। कुछ बीज जाडे मे उगते है तो दूसरो को अधिक गरम ऋतु की आवश्यकता पडती है। बीजो के लिए तीसरी आवश्यक वस्तु जल है। किन्तु जल की अधिकता नहीं होनी चाहिए, नहीं तो बीज सड जायेगे। उन्हें इतनी नमी तो अवश्य चाहिए कि उनका वह भोजन मुलायम पड जाये जो स्वय बीजो के कोष मे एकत्रित रहता है ताकि वे उसे अपने कोमलाकुरो मे पहुँचा सके। ज्यो ही वृद्धि प्रारम्भ होती है पौधे को भोजन की आवश्यकता पडती है। जब बीज के भीतर का खजाना खाली हो जाता है तब ऐसा अवसर उपस्थित होना चाहिए कि पौधा अपनी जडो के द्वारा धरती से अपने भोजन की सामग्री प्राप्त कर सके। निरी मिट्टी से भी पौधे का काम नहीं चलता। उन्हे तो खाद का पानी (Soilwater) चाहिए जिसमे अनेक लवण घुले रहते है। शुद्ध पानी भी पौधे को आवश्यक खनिज लवण नहीं पहुँचाता, किन्तु धरती के कणो से ससर्ग प्राप्त किया हुआ जल पौधे को आवश्यक वस्तुए पहुँचाता है।

बिजली पौधों की बाढ़ में सहायता करती है

बिजली के द्वारा पौधो को गरमी, प्रकाश और जोर पहुँचाने के लिए अनेक रोचक प्रयोग किये गए हैं। जहाँ वायु मे पर्याप्त बिजली उपस्थित रहती है वहाँ वृक्षो की उपज थोडे ही उपयुक्त समय मे आश्चर्यजनक तीव्रता के साथ होती है। जिस ऋतु मे बिजली अधिक कडकती है उसमे वृक्षो की विशेष वृद्धि होती हुई देखी गई है। इन्ही सकेतो से प्रोत्साहित होकर लोगो ने ऐसे सफल प्रयत्न किये है जिससे विभिन्न पौधो पर बिजली का प्रयोग करके उनकी विशेष वृद्धि की गई है। खेती-बारी के काम मे बिजली का प्रयोग प्रकाश के

रूप मे भी किया गया है और उसका उपयोग, हाल ही मे धरती को गरमी पहुँचाने के लिए भी किया जाने लगा है। धरती को गरमी पहुँचानेवाले तार भी ईजाद हो गये हैं और १९३३ मे यह भी प्रयोग करके देखा गया कि जिन गमलो मे बिजली द्वारा गरमी पहुँचाई गई थी उनमे लगे हुये पौधे उन पौधो की अपेक्षा जिनमे खाद से गरमी उत्पन्न हुई थी १५ दिन पहले ही तैयार हो गये। इससे जो चीजे बाजार मे आई उनसे इतना अधिक लाभ हुआ कि सारा बिजली का खर्च निकल आया और फिर भी कुछ बच रहा। यह बात निश्चित ही है कि जो वस्तु सब से पहले बिकने आती है उसके दाम अधिक होते है। अतः बिजली से खेतीबारी मे सहायता लेने से अच्छा लाभ हो सकता है। और इसीलिए पाश्चात्य देशो मे इसका महत्व बढ गया है। बिजली से खेती के सम्बन्ध मे दूसरा लाभ यह हो सकता है कि बिजली के करेन्ट के द्वारा उन हानिकारक कीडों को नष्ट किया जा सकता है जो खेती को नुकसान पहुँचाते है।

रंग और वृक्ष-वृद्धि

वृक्ष की बाढ के लिये पीली और लाल रोशनी बडी अनुकूल होती है। हरे पौधो को रग पहुँचाने वाले पदार्थ को क्लोरोफिल कहते हैं। और इस क्लोरोफिल को बढाने वाली प्रकाश की कुछ लहरे होती हैं। हालैन्ड के खेती-विशेषज्ञों ने प्रकाश का प्रयोग कर के पौधो की पत्तियो, फूलो और फलो को बडा लाभ पहुँचाया है क्योंकि इस प्रकाश मे पीली और लाल किरणे पर्याप्त होती है किन्तु गरमी नही होती।

पौधों की चमत्कारिक उर्वरा शक्ति

जिस सख्या मे कुछ पौधे बीज उत्पन्न करते है उसका विचित्र उदाहरण पोस्ता या खस-खस है, जिसकी एक बोडी मे ३००० बीज होते है। यदि प्रत्येक

बीज इतने ही बीज उत्पन्न करता तो छ वर्ष मे सारा ससार इन्ही बीजो से आच्छादित हो जाता। रग-बिरगे फूलों के बीज बिल्कुल रेत कण के-से महीन होते हैं और उनकी सख्या हजारो होती है 'एकरांपेरा' व श के केवल एक पौधे से एक ऋतु मे ७४०००००० बीज हो सकते हैं। नदी किनारे उगने वाली साधारण 'सरपत' नामक पौधे के ५ लाख बीज होते हैं।

पौधे के अंग

जब बीज का कुल्ला फूटता है तब पौधे की जड सब से पहिले निकलती है। जड के दो काम होते है, एक तो पौधे को मजबूती से जमाना और दूसरा धरती से पानी खीचना जिसमे लवण घुले रहते है। इसके साथ ही जडें भोजन-भडार का भी काम करती है, जैसे गाजर। पौधे का धड पत्तियो को ऊपर उठाता है जिससे उन्हे हवा और प्रकाश प्राप्त होता है और साथ ही फूल कीडो की पहुँच से बाहर हो जाते है। तीसरा काम धडका यह होता है कि वह जड से पत्तियो तक जल और भोजन पहुँचाता है। जिन पौधो मे धड जडो की तरह धरती के भीतर बेडा-बेडा फैल जाता है और भोजन भडार का काम करता है उसे (Rhizome) 'रिजोम' कहते है। यदि उसमे अधिक सुधार हो जाता है तो वह 'ट्यूबर' (tuber) बन जाता है, जैसे आलू मे। आलू एक फूला हुआ धड है जिसमे भोजन भरा रहता है। वह जड नही है, इस बात का प्रमाण उसकी आखे है जो सकुचित कलियाँ होती हैं।

पत्तियाँ

पत्तियाँ पौधे के साँस लेने वाले अग है और भोजन का कारखाना है जिसमें श्वतसार बनता है। पुष्पो का काम बीज बनाना है ताकि धीरे-धीरे नये पौधे हो। उनकी बनावट फलो की रचना करने मे सहायक होने के लिये विभिन्न प्रकार से अनुकूल होती है। फूलो के विभिन्न अगो के विशेष कार्य होते है

किन्तु सब का उद्देश्य एक ही होता है। बाहर का प्याले के समान हरा अंग उसकी रक्षा करता है। कली में वह फूल के भीतरी हिस्सों पर लिपटा रहता है। प्याले के भीतर पंखुड़ियाँ होती हैं जो साधारणतया रंगीन होती हैं और इस प्रकार बनी होती है कि कीड़े उनकी ओर आकर्षित हो जायें। बीच में पराग-केसर होती है जिसमें बीज-बक्स रहता है। पौधों को उन पदार्थों की आवश्यकता होती है जो उसे पृथ्वी से मिलते हैं :—कलमीशोरा, कैलशियम सल्फेट, सोडियम क्लोराइड, मैगनेशियम सल्फेट, कैल्शियम फास्फेट, आयरन क्लोराइड और पानी। इनके अतिरिक्त पौधे को कार्बन की भी आवश्यकता होती है जो उसे वायु से प्राप्त होता है। इस 'कार्बन डाइआक्साइड' को पत्तियाँ चूस लेती हैं। प्रकाश रूपी शक्ति को पौधा पत्तियों के हरे वर्णक (पिगमेंट) से ग्रहण करता है जिसे क्लोरोफिल कहते हैं।

कार्बन का शोषण उसी दशा में होता है जब यह क्लोरोफिल उपस्थित रहता है और प्रकाश के प्रभाव के अन्दर होता है। इस हरे वर्णक का विशेष गुण यह है कि वह प्रकाश से नीला प्रकाश और सूर्य से लाल प्रकाश सोख लेता है और पीली किरणों को आने से रोकता है। यदि ये पीली किरणें पौधे में प्रवेश कर जायें तो उसके रचना तन्तुओं को आवश्यकता से अधिक गर्मी पहुँचा कर हानि करें।

वृक्ष-जीवन की विचित्रताएं

फूल वाले कुछ पौधो ने पोषण प्राप्त करने के विशेष ढग ग्रहण कर लिए है। इन विचित्र—भोजी पौधो के समुदाय मे तीन प्रकार के पौधे होते हैं :—(१) 'सेप्रोफाइट' जो वनस्पतियो के सडे हुए पदाथा पर अपना जीवन यापन करते है, (२) परोपजीवी, जो अन्य पौधों से पोषण प्राप्त कर लेते है, और (३) कीट-भक्षी पौधे जो बडे ही विचित्र होते है। 'सेप्रोफाइट' मे कुछ आशिक सेप्रोफाइट होते है और कुछ पूर्ण सेप्रोफाइट आशिक सेप्रोफाइट मे हरी पत्तिया होती हैं और वे अपना थोडा-सा भोजन साधारण वृक्ष जीवन के ढग पर तैयार कर लेते है किन्तु साथ ही Fungus (कुकुरमुत्ता) की सहायता से अपना सेन्द्रिय भोजन सात्म कर लेते हैं। पूर्ण सेप्रोफाइट का हरा वर्णक बिलकुल लुप्त हो जाता है और उनका रग मटमैला सा भूरा हो जाता है। यह अपना भोजन जडो के द्वारा नही प्राप्त करते, अपने नौकर कुकुरमुत्तो की सहायता से भोजन रूपी रस चूसा करते है। फगस के तार उसकी जडों मे प्रवेश कर जाते हैं और उनमे घुला हुआ भोजन भेजते रहते है।

जिस प्रकार सेप्रोफाइट आशिक और पूर्ण दो तरह के होते है वैसे ही परोपजीवी भी आशिक और पूर्ण दो प्रकार के होते है। इनके आशिको मे भी हरी पत्तियाँ होती है और ये स्वय थोडा-सा अपना भोजन अपने आप तैयार करते हैं, किन्तु जल और लवणों का घोल दूसरे पौधों से खीचते हैं। ये चीजें

उन्हें अपनी जड़ों से नहीं प्राप्त होतीं। पूर्ण परोपजीवी जिस पौधे को लूटना चाहते हैं उसके चारों ओर लिपट जाते हैं। उनका प्रेमालिंगन शोषित पौधों की जड़ों को भी नहीं छोड़ता। इनके बीज चिड़ियों के द्वारा बोये जाते हैं। और उगते ही ये अपने दत्तक-पिता वृक्ष का रस चूसना शुरू कर देते हैं।

मास-भक्षी पौधे भोजन प्राप्त करने का साधारण तरीका एक दम छोड़ देते हैं। वे अपनी परिवर्तित पत्तियों की सहायता से कीड़े-मकोड़ों को पकड़ लेते हैं और अपने शिकार को जान से मार कर हजम कर जाते हैं। इनकी लसदार पत्तियों में बाल होते हैं जो अत्यन्त सुवेधी होते हैं। जब कोई मक्खी या मच्छर उनकी पत्तियों पर आकर बैठता है, तब वे उसके ऊपर झुक जाती हैं और एक ऐसा तरल पदार्थ निकालती हैं जिसमें इस प्रकार के भोजन को गलाने और पचाने की शक्ति होती है और जब यह भोजन शोषित हो जाता है, तब बाल और स्पर्श भुजाएँ अपनी पहिली स्थिति पुनः ग्रहण कर लेती हैं और दूसरे शिकार को पकड़ने के लिये तैयार हो जाती हैं।

इनके अतिरिक्त भी पौधों की अनेक जातियाँ होती हैं जैसे दो पौधों का साझा करके एक साथ उगने वाले पौधे, जल में उगने वाले पौधे आदि।

जंगल-रसायन-शाला

वृक्षों के जंगल सबसे बड़ी रसायन-शालाएँ हैं। वृक्ष अपने छिद्रों द्वारा अक्षरशः साँस लिया करते हैं. और ये छिद्र लाखों की संख्या में होते हैं। हवा की आक्सीजन को सोख लिया जाता है और 'कार्बन डाइआक्साइड' को निकाल दिया जाता है। साथ ही हरी पत्तियाँ प्रकाश की सहायता से कार्बनडाइ-आक्साइड को अपने अन्दर ले जाती हैं और पानी में मिला कर शक्कर और श्वेतसार बनाती हैं। इस क्रम से जो आक्सीजन भीतर गया था वह बाहर

निकल आता है और वायु में व्याप्त हो जाता है। इस प्रकार उस कमी की पूर्ति होती है जो पशु साँस लेकर उत्पन्न करते है।

यदि वृक्षो और हरे पौधों का लाभकारी कार्य घट जाये, तो सारा जीव-जगत खतरे मे आ जाये। जगल के वृक्षो की पत्तियों से पर्याप्त पानी भी निकला करता है।

कुछ फल जैसे आम या, सेव, जीवित पदार्थ होते है और पेड से तोड लिये जाने के पश्चात् भी वे साँस लेते रहते है। वे बीजो को अपने अन्दर उस समय तक, सुरक्षित रखते है जब तक कि वे परिपक्व न हो जाये। अतः जब फल वृक्ष से पृथक कर लिया जाता है तब भी बीज फल पर अपना निर्वाह करता है और उसी से भोजन ग्रहण करता है। पक्वावस्था रोकी जा सकती है और तोडे हुए फल का जीवन दीर्घ-कालीन बनाया जा सकता है, या तो फल को ऐसे स्थान मे रख कर जहाँ का तापमान बहुत कम हो या ऐसी आबोहवा मे छोड देने से जिसमे आक्सीजन तो कम हो और कार्बनडाइआक्साइड अधिक। इस दूसरे तरीके से फल अधिक दिन तक चल सकते है। आधुनिक बिजली-विज्ञान ने इन सब बातो को सुलभ कर दिया है।

पौधो से अनेक औषधियाँ भी तैयार होती है और कुछ विष भी प्राप्त होते है जो थोडी मात्रा मे प्रयोग करने से औषधियो की तरह ही मूल्यवान होते है। कुछ वृक्षो और उनके पुष्पो और बीजो से सुगन्धित और उपयोगी तेल भी प्राप्त होते है जैसे लोग, कपूर, दालचीनी और अलसी, लाही, बिनौला, पुदीना आदि। इन तेलो की उपस्थिति के कारण ही कुछ पौधों मे सुगन्ध होती है, और यह सुगन्ध कीडे-मकोडो को उन पौधो की ओर आकर्षित करती है और ये कीडे पराग-वाहक का काम करके पोधो को लाभ पहुँचाते है।

जो पुष्प खाए जाते हैं

अमेरिका के आदिम निवासी सूरजमुखी के बीजों की रोटी बनाते है। ये बीज मुर्गियो और पशुओ के खिलाने के काम मे भी लाए जाते हैं। इनका तेल साबुन और खली के लिए बडा उपयोगी होता है। कोदो के चावल भी खाने के काम मे आते है और ये घास के बीज ही है। शकर मिलाकर गुलाब के फूलो से गुलकन्द का स्वाद तो हर हिन्दुस्तानी जानता है और यह काफी दिन तक सुरक्षित भी रहता है। गुलाब की कलियाँ, तथा बनफशे और चमेली के फूलो को सुखाकर चीनी भोजन-विशेषज्ञ मुरब्बा (candy) बनाते है। चीनी लाग लिली की एक जाति को भी तरकारी की तरह प्रयोग करते हैं।

'बटर ट्री' के पुष्पां को विभिन्न प्रकार से तैयार करके, भारत की कुछ पहाडी जातियाँ खाती हैं। केले के पुष्पों को जापानी एक न्यामत समझते हैं।

कुछ पुष्प बड़े जहरीले होते है, जैसे 'नाइट शेड' या 'बैलेडोना'। इनका फूल नीला और कटोरेनुमा, देखने मे सुन्दर और स्वाद मे मीठा, किन्तु बडा जहरीला होता है। इस पौधे का सारा भाग, पत्ती, फूल, जड आदि जहरीला होता है। किन्तु समस्त विषों की तरह यह भी औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। 'हैन बेन' भी औषधि की तरह काम में लाया जाता है। इसके भी सारे भाग जहरीले होते है। इसकी जडों को धोखे से 'पार्सनिप' समझ लेने से कभी-कभी बडी भयकर घटनाएँ हो जाती है। इसका फूल 'क्रीम' रंग का होता है, जिसमें मोटी-मोटी नालों नसे दिखाई देती हैं। यह काफी बडा भी होता है और पत्तियां से गंधे होते है। इसकी दुर्गन्ध लोगों को इसे छूने से रोकती रहती है। विभिन्न नाइट शेड' और 'हैन बेन' तम्बाकू, टमाटर आदि आलू वंश के है। इस वंश मे भयकर जहरीले पौधे होते है किन्तु साथ ही

औषधि के रूप मे और पौष्टिक भोजन के रूप मे भी इस वश के पौधे काम आते है।

तम्बाकू का घनिष्ट सम्बन्ध 'नाइट शेड' से है और यह नारकोटिक है। यदि इसका दुरुपयोग किया जावे, तो यह खतरनाक हो सकती है। टमाटर इस वश का उपयोगी सदस्य है और स्वय आलू भी एक सीमा तक उपयोगी है। यह बात सर्वसाधारण को नही मालूम है कि आलू मे भी जहर होता है। उसकी पत्तियाँ और फल नारकोटिक होते हैं और कभी-कभी खाने वाले कन्द मे भी विष होता है। यह विष उन आलुओ मे अधिकता से पाया जाता है जो धरती के ऊपर होते है और हरे हो जाते हैं। साधारणत: छीलने से हानिकारी पर्त निकल जाता है और पकाने से जहर मर जाता है। जहरीले पर्त को निकाल कर जानवर को खिला देने से उनमे आलू का जहर प्रवेश कर जाता है।

चमकने वाले पौधे

कुछ पौधे या उनके रेशे ऐसे चमकते हैं मानो उनमे प्रकाश है। कुछ फूलों मे उस समय प्रकाश दिखलाई देता है जब उनमे ऐसी हवा का समर्ग होता है जो बिजली से परिपूर्ण रहती है।

कुछ पौधे बैरोमीटर का काम करते हैं

अनेक पुष्प प्रकाश, उष्णता और ठण्डक को अत्यन्त अनुभव करते है और ऐसा व्यवहार करते हैं मानो बैरोमीटर का काम करते हैं। कुछ सुन्दर छोटे-छोटे पुष्प बदली के दिनो मे बन्द रहते है और धूप के दिनो मे प्रातः काल खुल जाते है और दोपहर को बन्द हो जाते हैं। जैसे :—शखपुष्पी और वनगोभी के पुष्प। जिस समय फूल खिला हो और मेह बरसने की सम्भावना हो तो वे इसलिए बन्द हो जाते हैं कि पानी मे उनका पराग बह न जाये। कुछ फूल सूर्य की गति के अनुसार खिलते बन्द होते है और तापमान के परिवर्त्तन

के अनुसार उनमे सवेदन होता है कुछ पुष्प रात्रि के आगमन पर बन्द हो जाते है और सूर्योदय पर पुनः खिल उठते है। यह बात तो प्रायः सभी को मालूम है कि छुई-मुई की पत्तियाँ तनिक भी छूने से बन्द हो जाती है।

पुष्पों पर बाजों का असर

कुछ पुष्पो पर आवाज या बाजे का भी असर पडता है। उनमे से कुछ अन्य फूलो की अपेक्षा इतने सुवेधी होते है कि उन पर आवाज की लहरो का प्रभाव विशेष पडता है, अतः अगर लगातार बाजा बजता रहे तो वे शीघ्र कुम्हला जाते है।

बीज यात्रा करते हैं

जीवधारियों और पौधो मे यह भेद बतलाया जाता है कि जीवधारी चलते है और पौधे एक स्थान पर जमे रहते हैं। किन्तु यह नियम अटल नही है, क्योंकि कुछ जीव नितान्त आलसी-जीवन व्यतीत करते है। उदाहरण के लिये एक समुद्री एनीमोन को ले लीजिये। वह अपना सारा तरुण जीवन एक ही चट्टान पर बिता देता है और वहाँ से टस से मस नही होता जब तक कोई परिव्राजक केकडा उसे अपनी पीठ पर उठाकर अन्यत्र न ले।जाये। दूसरी ओर सब पौधे अपने घर ही मे रहने वाले नहीं होते। एक बीज के गर्भ मे एक पौधा छिपा रहता है। और बीज बहुधा बडी लम्बी यात्राएँ करते है। पानी के पौधे जिनकी जडे एक स्थान पर लगर डाल कर नहीं टिक जाती, स्वाभाविक रूप से इधर-उधर उतराया करते है। धरती पर उगने वाले पौधों की भी यात्राएँ होती है। ऐसे भी पौधे होते है जो एक दीर्घ काल तक शुष्क पडे रहने के पश्चात् पुनः उगना शुरू कर देते है। ये कई महीनो या वर्षों तक शुष्क और मरे से पडे रहने के बाद पुनर्जन्म ग्रहण करते हैं। सूख जाने के पश्चात् हवा इन्हें दूर-दूर तक उडा ले जाती है। ये या तो किसी नम जगह पर टिक जाते है या

बरसात आने पर इनके रुखे हुये अग फिर से जागृत हो जाते है और इनमे किल्ले फूटने लगते है। बीज तो अनेक ऐसे होते है जो पचासो वर्ष बाद पौधे उत्पन्न कर सकते है। कमल के बीज के विषय मे तो यहाँ तक कहा जाता है कि वह पूरी शताब्दी तक सुरक्षित रह सकता है।

छोटे-छोटे पौधे अपने आस-पास ही अपने बीज गिरा देते है। पोस्ते की बोडी अपने लटकते हुये सिर से बीजो को गिरा देती है। किन्तु पोस्ते के बीज भी हल्के होने के कारण हवा के द्वारा बडी दूर तक उड कर जा सकते है। यदि भिन्न-भिन्न पौधो के सारे बीज अपने मूल पौधे के पास ही रहते तो उगने वाले किल्ले एक दूसरे को दवा देते। अतः पौधों को अपने बच्चो को बहुत दूर तक भेजने के अनेक ढग प्राप्त हें। कभी-कभी बीज अकेले ही यात्रा करते हैं और बीजों की बोंडी को पेड ही पर सूखने के लिये छोड जाते है। और कभी-कभी पूरा का पूरा फल यात्रा करता है और कुछ अधिक काल तक बीजों की रक्षा करने का काम जारी रखता है।

बीजो की यात्रा करने का एक दूसरा तरीका यह होता है कि उनका फल बडे धडाके से खुलता है। कुछ बीजा की बोडियाँ ऐसी होती है कि पूर्ण रूप से पक जाने पर यदि उन्हे तनिक-सा दवा दिया जाय, तो फट से भीतर के सारे बीज चारो ओर चटख पडते है। कुछ छोटी-छोटी बोडियाँ ऐसी होती है कि अधिक गरमी पडने से वे स्वय ऐसे जोर से चटखती है कि उनकी आवाज पास बैठे हुए आदमी को सुनाई देती है। चटखने के बाद बोडी के दोनों भाग ऐंठ जाते हे और बीज इतने जोर से निकल पडते है कि काफी दूर तक छितर जाते है।

कुछ बीजो को हवा पौधों ही से उडा ले जाती है, कारण यह होता है कि वे बड़े नन्हें और हल्के और चपटे होते है। चपटे बीजो को उड़ने मे

सरलता होती है। कुछ बीज परदार भी होते हैं, जैसे 'पौपलर' और 'विलो' के बीज। ऐसे बीजों को हवा बड़ी दूर तक उड़ा ले जाती है और जहां पर वह गिरते हैं उनके परों के समान रोएं उन्हें नम जगहों में जमा देने में सहायता करते हैं।

कुछ बीजों की यात्रा में जानवर सहायक होते हैं। कुछ बीज तो चिड़ियों के पैरों में मिट्टी के द्वारा चिपक जाते हैं। कुछ सुन्दर फलों को चिड़िया बड़े चाव से ढूंढा करती हैं, कुछ फल जो मनुष्य के लिए जहरीले होते हैं चिड़ियों को कोई हानि नहीं पहुँचाते। कभी-कभी चिड़ियाँ फूल के कोमल भाग को खा लेती हैं और कठोर बीजों को अपनी चोंच पर से वृक्ष पर रगड़ कर पोंछ कर इधर-उधर फेंक देती हैं। किन्तु बहुधा वे सारे फल को निगल जाती हैं और बीज उनके शरीर से अछूते निकल आते हैं। फल खाने वाले कुछ लोग भी फल खाते समय बीजों को इधर-उधर फैला देते हैं। कुछ बीज ऐसे होते हैं कि उनमें हुक-से लगे रहते हैं। और इन हुकों की सहायता से वे चिड़ियों के पैरों में, जानवरों के रोमों में और मनुष्य के कपड़ों में फंस कर बड़ी लम्बी-लम्बी यात्रा करते हैं।

लाभ होता है, क्योकि अर्बुद उन्हे शरण प्रदान करता है और उनकी परिवृद्धि मे जिस भोजन की आवश्यकता होती है वह भी उन्हे मिल जाता है और प्राय वृक्ष को कोई हानि भी नही होती क्योकि वह अपने मे अर्बुद रूपी अपने तन्तुओ की विशेष वृद्धि करके अवाञ्छित आगन्तुक को घेर लेता है और उससे अपनी रक्षा कर लेता है। जो कीडे अर्बुद के भीतर बन्द रहते है वे चिडियों तथा अन्य शत्रुओ की पहुँच से बाहर रहते है और उसके भीतर ही अपना जरूरी भोजन प्राप्त कर लेते है। ये अर्बुद उन कीडो के लिए कैदखाने नहीं होते बल्कि जब अण्डे से इल्ले बनते हैं और बाहर निकलना चाहते है तो वे उसमे छेद कर लेते हैं और निकल कर वायु मे विचरण करने लगते है। ये अर्बुद पेडों के शरीर मे वैसे ही असाधारण रूप से बढ जाते है जैसे कि मानव शरीर मे वितौडियाँ निकल आती है।

इन कीडे-मकोडो के अतिरिक्त पौधो को खाने वाले अनेक जीव होते हैं। कुछ पौधो मे काँटे होते है जो अनेक जीवो से उनकी रक्षा करते है। कुछ वृक्षो के शरीर के भीतर एक प्रकार का कवच होता है जो उन्हें घोंघों की रेती के समान जीभो और भिनगो के जबडो से बचाता है। कुछ पौधो का जहर और कुछ की पत्तियो के तीव्र रोये पशुओ से उनकी रक्षा करते है। कुछ पौधो की पत्तियाँ ऐसी चिपकने वाली होती हैं कि वे अनामन्त्रित मेहमानो को दूर ही रखती है।

पौधों में जीवन की होड़

कुछ सुन्दर पुष्प थोडे दिनों के बाद फल का रूप ग्रहण कर लेते है। आस पास की झाडियो पर किसी बेल का चढ जाना इस बात का स्मरण कराता है कि प्रत्येक हरे पौधे को प्रकाश की आवश्यकता होती है। ऐसे बहुत थोडे पौधे है जो घनी छाह मे अच्छी तरह बढते है। बडे पेडो के नीचे छोटे

पौधे मुश्किल से बढते है। जब बहुत से पोधे अधिक पास-पास एक दूसरे से सटे हुये उगते है, जैसे किसी झाडी मे, तो स्वाभाविक रूप से सब से ऊँचे पौधे को अधिक प्रकाश प्राप्त होता है। किन्तु कुछ पौधो ने अनुकूल स्थान प्राप्त करने के लिये एक अन्य उत्तम उपाय ढूंढ निकाला है। इसके बजाय कि वे अपने तने को मजबूत बनाएँ जैसा कि कुछ वृक्ष बनाते हैं, वे दूसरे पौधों का सहारा लेकर उनके ऊपर चढ जाते है। प्रायः बेलो के तने इतने मजबूत नहीं होते कि उनमे पर्याप्त पत्तियाँ और फूल टिक सकें। इसीलिये उन्हे बाहरी सहायता की जरूरत पडती है। कुछ बेले लम्बाई मे बडे-बडे वृक्षो से भी अधिक हो जाती है और वे बढ भी तेजी से जाती है। किन्तु वे बिना सहारे के आगे नही चल पाती। उन्हे जो कुछ भी सामने मिलता है उसी के इर्द गिर्द अपने तने को लपेट देती है और यही उनके ऊपर चढने का सब से सरल तरीका है। कुछ बेलो मे बालदार जडो के गुच्छे के गुच्छे निकलते है और इन्ही के सहारे वे पेडो के तनो को पकड लेती है और उन्हे सीढी बना कर ऊपर चढ जाती हैं। मटर आदि कुछ बेलो मे ऊपर चढने के विशेष अग होते है जिन्हें 'टेड्रल्स' कहते हैं जो बडे सुवेधी होते है। ये कोमल हरे डोरे ज्यों ही किसी टहनी का स्पर्श कर पाते है त्यो ही वे उसके चारो ओर लिपट जाते है। कुछ बेले अपने हुकदार काँटो के सहारे से ऊपर की ओर प्रकाश प्राप्त करने के लिये उठती है।

पौधों में पराग मिश्रण

कुछ पोधे अपना पराग स्वय मिला लेते है। उन्हे स्वय-परागी कहा जाता है। उनके 'स्टैमेस' का पराग उनके 'स्टिगमा' पर गिर पडता है और बीज-बक्स (Ovules) मे पहुँच कर उन्हे उर्वरा बना देता है जिससे नवीन पौधे निकलने के योग्य बन जाते है। यह क्रिया उसी समय होती

है जब उपर्युक्त पुष्प अपनी जाति के दूसरे पुष्प से पराग प्राप्त नहीं कर पाता। स्वय-पराग-मिश्रित बीज छोटा और कमजोर होता है। इसीलिए अधिकतर पुष्प अन्तर-पराग-मिश्रण (Cross pollination) प्राप्त करने का कोई न कोई ढग ग्रहण कर लेते है। एक पुष्प से दूसरे पुष्प तक पराग का स्थानान्तरित होना कई विभिन्न कार्यवाहको के द्वारा होता है, इनमे से कीडे और हवा बडे महत्त्व के है। पानी भी पराग को दूर तक ले जा सकता है, पुष्पो पर फेरी लगाने वाले कीडे पराग को यथास्थान पहुँचाने मे बडी सहायता करते हैं और हवा एक पुष्प से उडाकर पराग को दूसरे पुष्प तक पहुँचा सकती है। अनेक दशाओं मे जीव-जन्तु ही कार्य-वाहक (agents) होते है जैसे चिडियाँ और चमगादड, 'स्नेल' और 'स्लग' तथा विभिन्न प्रकार के कीडे-मकोडे।

रग और गंध कीड़ों को आकर्षित करते हैं

सुन्दर बगीचे और खिले हुए फूलो के पास अनेक कीडे-मकोडे आते हैं। सुगन्धित पुष्पों का ध्यान करना और मधु-मक्खियों की भन-भनाहट मन से निकाल देना एक असम्भव-सा कार्य मालूम देता है। प्राकृतिक रूप से मधु-मक्खियाँ फूलो के पास किसी परोपकार की भावना से नही आतीं कि वे एक फूल का पराग दूसरे फूल तक पहुँचा दे। वे तो स्वय अपने काम से आती है ताकि उन्हें अपने और अपने समुदाय के भोजन के लिए रसामृत और पराग मिले।

कीडे-मकोडों का आगमन सदा पुष्पो के लिए लाभदायक ही नहीं होता। कुछ मधु-मक्खिया पुष्पो की मिठास लूटने का एक नया ढग निकाल लेती है अर्थात् वे रसामृत नली को बीच ही मे खुतर लेती हैं और बिना पराग तक पहुँचे ही पुष्पो की मधुरता ले भागती है। यदि अपना भोजन तलाश करते समय उनके अगों मे पराग-कण चिपक जाते है, तो वे 'पौलीनेटिङ्ग

एजेंट' का कार्य करती है। अतः कीड़े-मकोड़ो को अपनी ओर आकर्षित करना पौधों ही के लिए लाभदायक है और इस आकर्षण के लिए उसके पास दोही प्रलोभन, गन्ध और रग है, जिनके द्वारा 'क्रासपौलीनेशन' होता है। प्रयोगो से यह मालूम हुआ है कि मधु-मक्खियो मे रग-बुद्धि (Colour sense) होती है और वे गन्ध को भी अनुभव कर सकती है। पुष्पो की गन्ध और उनका रग निस्सदेह कीडो को आकर्षित करता है क्योंकि कीड़ो को देने के लिए उनके पास येही पारितोषिक होते हैं।

रग भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रदर्शित होते है। चमकीले फूल धूप मे चमकते है और पीले फूल अँधेरे मे टिमटिमाते है। कुछ फूल स्वय तो छोटे होते है किन्तु उनके एक साथ सटकर इकट्ठे होने से एक गुच्छा बन जाता है जो कीडो को अपनी ओर आकर्षित करता है।

अनेक चमकीले पुष्पों मे गन्ध बहुत थोडी होती है या बिल्कुल ही नही होती, किन्तु कीडे-मकोडे इनमे भी एक गन्ध पा लेते है, और अनेक सुगन्धित पुष्प चमकीले और दर्शनीय नहीं होते। किन्तु अनेकानेक पुष्पो के पास यह दोहरा प्रलोभन होता ही है।

कीडे-मकोडो मे गन्धेन्द्रिय पर्याप्त परिवर्द्धित होती है। तेज गन्ध वाले पुष्प उन्हे इतनी दूर से आकर्षित कर लेते है जहा से रगो का दिखलाई देना असम्भव होता है और अँधेरे मे तो सफेद फूल भी नही चमकते। नीबू के वृक्षो से सायकाल कैसी भीनी सुगन्ध आती है। कुछ गन्ध ऐसी होती है जो धूप, मेह और रात्रि के आगमन से क्रमशः बढ जाती हैं।

कहा जाता है कि आध सेर मधु तैयार करने मे ३७००० बोझ रसामृत की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि लोग मधु-मक्खी को कमेरी या कार्य-संलग्न कहते है। श्रमिक मधु-मक्खियाँ जो शहद बनाने के लिए रसामृत और मधु-रोटी बनाने के लिए पराग जमा करती है, एक फूल से दूसरे फूल

पर अललटप्पू नहीं उड़ती, वे एक ही प्रकार के एक फूल से दूसरे पर उड़ती हैं। इस क्रिया का लाभ फूलों के लिए प्रत्यक्ष है। आम के बौर को पोस्ते के पराग की आवश्यकता नहीं होती बल्कि दूसरे आम के बौर की। सुसगठित अन्वेषण से मधु-मक्खियों को भी लाभ होता है। रसामृत सग्रह की विद्या सीखी जाती है। एक बार जब एक मधु-मक्खी ने यह मालूम कर लिया कि एक गुलाब अपना मधुर कोष कहाँ रखता है, तो दूसरे गुलाबों के पास जाने पर उसके समय और कष्ट की बचत हो जाती है। नये खजाने ढूढने मे समय भी लगेगा और कष्ट भी होगा।

मधु मक्खी के एक लम्बी "जीभ" होती है जो रसामृत की छोटी-छोटी बूँदों को चाटने का काम करती है उसके मुँह के और भी लम्बे-लम्बे अग होते हैं जो जीभ के इर्द-गिर्द लगे रहते हैं और एक चुसनी नली का काम करते हैं। रसामृत मुँह से चूस कर शहद की थैली मे पहुँचा दिया जाता है। मधु-मक्खी के मुँह का अम्ल-रस रसामृत का रूपान्तर करके उसे मधु बना देता है। यह परिवर्तन पूर्णता को उस समय प्राप्त होता है जब छत्ते की कोठरियो मे सारी सामग्री पहुँच जाती है। फूल अनेक प्रकार के होते है, कुछ मधु-मक्खी के योग्य, कुछ नम्र मक्खी के योग्य, कुछ भरो के योग्य, कुछ तितलियो के योग्य, कुछ पतिंगो के योग्य, और कुछ साधारण मक्खी के योग्य, अर्थात् पुष्पो के अग इस प्रकार व्यथित होते है कि एक विशेष प्रकार का कीट-आगन्तुक वाछित अन्तर-पराग-मिश्रण करने मे समर्थ होता है। इन विभिन्न कीटो के भिन्न-भिन्न प्रकार के मुखाग होते है और भिन्न-भिन्न लम्बाई की जिह्वाए। अतः इससे यह परिणाम निकलता है कि एक की अपेक्षा दूसरा कीट इस योग्य अधिक होगा कि वह रसामृत चूसने के समय, पराग से ढके हुए 'स्टैमेस' और पराग पकड़ने वाले 'स्टिगमा' को बटोर सके। जैसे उदाहरण के लिए 'हनी सकिल' पतिगा-पुष्प है, लाल लौंग (क्लोवर) मधु-मक्खी पुष्प है,

'कूकूपिट' मक्खी-पुप्प है और 'फिगरूट' वर्ष-पुष्प है।

अजन्मे पौधे

अजन्मे पौधे वे है जिनकी वृद्धि कलम लगाने से होती है न कि बीज से। इनमे गुलाब आदिक है। इनकी भिन्न-भिन्न जातियो में एक दूसरे पर कलम चढाई जाती है और उन्हे 'क्रास' कराया जाता है। आलू के बीजों को फलित कराया जाता है।

पत्तियों का रंग क्यों बदलता है?

पतझड की ऋतु मे पत्तियों का रग प्रायः पीला, नारगी, लाल और भूरा हो जाता है। भिन्न-भिन्न वृक्षो की पत्तियाँ भिन्न-भिन्न रग का प्रदर्शन करती है। कुछ पेड ऐसे होते है कि उनकी पत्तियाँ हरी अवस्था ही मे गिर जाती है। जब कोई प्रत्यक्ष रग परिवर्तन न हो तो यह समझ लेना चाहिये कि तीक्ष्ण वायु ने साधारण पतझड की क्रिया तक पहुँचने के पहिले ही पत्तियों को नोच डाला है। कुछ पेड़ ऐसे भी होते हैं कि उनकी पत्तियाँ मुर्झाने और सूख जाने पर भी टहनियों मे चिपकी रहती है और आगामी वर्ष के आने के पहिले नहीं गिरती। किन्तु सदा-बहारो को छोड कर साधारण वृक्षो की पत्तियाँ पतझड मे रग परिवर्तन करती है और फिर गिर जाती है।

पतझड़ के रग उन महत्वपूर्ण परिवर्तनो का बाहरी चिन्ह है जो पत्तियों के भीतर होते रहते है। पत्तियों का हरा पदार्थ, जिसे क्लोरोफिल कहते है, उस समय तक एक महत्वपूर्ण कार्य करता रहता है। जब तक कि प्रत्येक पत्ती पौधे के लिये भोजन भण्डार बनी रहती है। किन्तु पतझड के समय वृक्ष उस वर्ष का सक्रिय जीवन समाप्त करने के लिये तैयार हो जाते है और पत्तियो की भोजन बनाने वाली क्रियाये पूर्ण हो जाती है। गिरने के पहिले पत्तियाँ

अपने जन्मदाता वृक्ष को बहुत सी उपयोगी सामग्री लौटा देती ह। हरा वर्णक शर्करा और अन्य पदार्थ वृक्ष के धड और जडों के पास लौट जाते ह।

क्लोरोफिल के खडित हो जाने के साथ-साथ दूसरे वर्णक जैसे पीत वर्णक, दिखलाई देने लगते है। इस पीत वर्णक को 'कारोटिन' कहते हे। कुछ पत्तियो मे नील-वर्णक भी प्रकट होते है जो 'ग्लुकोम' और 'एरोमैटिक' पदार्थ का मिश्रण होता है। यह नील-वर्णक उन्ही पत्तियों मे दिखलाई देता है जिनमे शकर एकत्रित होती है और तापमान गिरा रहता है।

पतझड का रग उस समय शोख होना है जब कि गिरे हुये तापमान के साथ-साथ पानी और धूप भी पर्याप्त रहती है, क्योंकि ऐसी स्थिति मे पत्तियाँ धीरे-धीरे मरती है और हरे तथा पीतवर्ण को क्रमशः खडित होने के लिये तथा विशेष नील-वर्णक के बनने के लिये समय रहता हे। यह सम्भव है कि शोख रग पत्ती के लिये लाभकारी हो, कदाचित वे उसे हानिकारी किरणो से सुरक्षित रखते है अथवा उसे ऐसी किरणे सोखने का अवसर देते है जो उसके जीवन को दीर्घ बनाती है। मुर्झाने के पहिले पत्तियो की सुन्दरता सब से अधिक होती है, इस दशा का नाम "राख की सुन्दरता" कहा गया है, क्योंकि उस समय उनमे सिवा व्यर्थ की चीजों के और कुछ नही रह जाता।

प्रकृति की विचित्र जर्राही

जो पत्ती गिरने के करीब होती है वह बिल्कुल खाली हो जाती है, क्योंकि उस समय वह अपने मधुर-रस के अन्तिम बोझ को वृक्ष के हृदय में पहुँचा देती है, किन्तु शाखा मे अब भी रस रहता है, और यदि पत्ती के डण्ठल को पृथक कर के एक खुला घाव कर दिया जाय, तो वह रस निकल पडेगा, मानो वृक्ष का रक्त निकल गया। पत्ती के स्वय गिरने से वृक्ष मे कोई घाव नहीं होता। प्रकृति की विचित्र जर्राही उसे रोक देती है।

पत्तियो के गिर जाने से वृक्ष को लाभ ही होता है, क्योंकि पत्ती रहित हो जाने से वह इस योग्य हो जाता है कि बिना पानी की भयानक हानि किये हुये वह शीतकाल को बिता सकता है। वह वृक्ष, जिसकी जड़े ठण्ड और गीली धरती के पानी का उपयोग नही कर सकती इतनी क्षमता नही रखता कि उसमे क्रियाशील पत्तियाँ बनी रहे और सर्दी मे पानी की भाप निकालती रहे। विश्राम की अवस्था ही मे उसका कल्याण है।

समुद्र-गर्भ में पेड़ पौधे

भूगोल-विद्या-विशारदो का कहना है कि जिस प्रकार पृथ्वी स्थल पर सुन्दर प्राकृतिक दृश्य, पेड-पत्ते, हरियाली आदि दिखाई देती है उसी प्रकार समुद्र के गर्भ मे भी विविध प्रकार की हरियाली, मनोरजक एव विचित्र जन्तु, तथा अत्यन्त आश्चर्यजनक दृश्य उपस्थित है। समुद्र के जल के नीचे का धरातल कितना सुन्दर और रमणीय है और वहाँ कैसे विचित्र पौधे और जन्तु पाये जाते है इसका वर्णन जनरल जेम्सन ने 'मेलबोर्न हेरल्ड' मे किया है। वे लिखते हें :—

जल के भीतर बाग-बगीचे, फुलवाडी और पार्क देखने को कदाचित् नही मिलेंगे जैसे कि मेलबोर्न के समान बडे नगरों मे साधारणतया देखे जाते हे। फिर भी समुद्र के अन्दर का दृश्य स्थल के प्राकृतिक दृश्यो से कम सुन्दर नही होता। समुद्र के अन्दर जहाँ मूगे की चट्टाने होती हैं वहाँ पर सभी प्रकार के जलजन्तु तथा पानी के पेड पौधे बहुतायत से होते है।

मूगे की चट्टानो के चारो ओर और ऊपर भी हरे-हरे पौधे उगे हुए है। कुछ तो बागो मे उगने वाले पौधो ही के समान है और कुछ ऐसे जान पडते है मानो वे पत्ते रहित लताए हो। दूसरी ओर नजर डालने पर चौडे पत्ते वाले छोटे पेडों के गुच्छे दिखाई देते है और कुछ पौधो के चौडे-चौडे फन

सीधे खडे हुये है परन्तु ये सभी वास्तव मे समुद्र की सतह से ही नही उग खडे हुये है। इन मे से कुछ ऐसे भी है जो शुरू मे चलते फिरते छोटे जल जन्तु थे और किसी स्थान पर रुकावट पड़ने के कारण अटक जाने से वहीं पर स्थिर हो गये ह और उनमे जडे फूट निकली है।

पौधों में चमत्कार

पेड़ के भीतर घर

पेड के खोखले मे चिड़िया तो घोसला रखा ही करती है, मगर कभी-कभी हजरते इसान भी उनमे घोसला बना लेते है। अमेरिका के वाशिगटन नगर के पास लगभग ढाई हजार वर्ष पुराना एक पेड था। इसकी ऊँचाई ३०० फीट और इसकी परिधि २० फीट थी। यार लोगो ने इसके तने के दो टुकडे कर दिये। एक टुकडा खडा रखा, दूसरे को लिटा दिया। खडे अंश को भीतर से काट कर बीस फीट परिधि का एक गोलाकार घर बनाया गया, जिसमे मेज कुर्सी वगैरह सब सामान बाकायदा सजाया है। दूसरे लेटे हुए अश के भीतर तीस फीट लम्बा और १८ फीट चौडा एक भोजनालय बनाया है।

एक ही पौधे से आलू और टमाटर

बीएट्रिस किग की लिखी हुई एक छोटी-सी पुस्तिका "सोवियट रूस में बच्चे" से मालूम हुआ कि वहा के प्राणि-विद्या और प्राकृतिक-विद्या के केन्द्रों मे बच्चो को वृक्षो के सम्बन्ध मे महान् आश्चर्यजनक कार्य सिखलाये जाते है, जैसे :—

(१) जैसे एक ऐसा पौधा उत्पन्न करना जिसके नीचे के भाग मे आलू उगे और ऊपरी भाग मे टमाटर उपजे, साथ ही दोनों ही उत्तम प्रकार के भी हों।

(२) ऐसे खरबूजे उत्पन्न किये जॉय, जो मास्को प्रदेश मे उग सकें,

ताकि मास्को मे खरबूजे मँगाने के लिए रेलगाड़ियों मे स्थान न घिरे और आवागमन के कारण खरबूजों का नष्ट होना बच जाये।

(३) नये-नये प्रकार के फल उत्पन्न किये जाँय।

(४) ऐसा गेहूँ पैदा किया जाय जो अति शीत प्रधान प्रदेशों की अल्पकालीन ग्रीष्म ऋतु मे उत्पन्न हो जाये।

बिना गुठली के

प्राचीन ग्रन्थों मे भी कुछ ऐसे उदाहरण पाये जाते है जिनसे मालूम होता है कि कुछ वृक्षों को चमत्कारिक ढग से उत्पन्न करने के प्रयोग प्राचीन समय मे किये गये थे। उदाहरणार्थ वृक्षायुर्वेद के कुछ श्लोक लिखे हुए मिलते है। उनमे अनार और आम आदि के फलों को बिना गुठली के उत्पन्न करने की विधियाँ है।

पौधों के नाम

साग-भाजी तथा फल आदि को प्रयोग मे लाकर करते ही हैं। जड़ी-बूटियो मे पौधों का मूल्य केवल डाक्टर-वैद्यो ही को नही विदित है बल्कि साधारण गृहस्थ और मामूली देहाती भी दवा के रूप मे उन्हे प्राय. काम मे लाता है। औषधिरूप मे पोधो पर अनेक ग्रन्थ है। इस सम्बन्ध मे कुछ अधिक लिखना तो पिष्टपेषण ही होगा। ब्राह्मी, त्रिफला, मुण्डी आदि जड़ी-बूटियो के गुण कौन नहीं जानता? नीबू, आवला, पपीता, सेम, अगूर, टमाटर, अमरूद आदि फलो की महिमा किससे छिपी है? पालक, मूली, गाजर, धनिया, पोदीना आदि शाको का मूल्य साधारण से साधारण मनुष्य भी जानता है। ढाक, नीम गूलर, पाकर आदि वृक्षो का काष्ठादि औषधियो के सम्बन्ध मे पर्याप्त उपयोग बताया गया है। सोठ, पीपल, हर्र आदि लाभदायक मसालों को हम रोज ही इस्तेमाल करते हैं। अन्न की महिमा तो सब पर विदित ही है। कौन ऐसा मनुष्य है जो प्रति दिन अन्न न खाता हो। इन सब बातो के द्वारा पौधों की उपयोगिता दिखलाना, सूर्य को प्रकाश दिखलाना है। आधुनिक विज्ञान ने पेड़ो की छालो और अनेक फूल-पत्तो तथा घास आदि से तरह-तरह के रग-रौगन, तेल-फुलेल निकाल लिए हैं। और कुछ पौधो की जटाओ के रेशो से लोगों ने कपड़े भी बना लिए हैं। पेड़ो के रस से केवल औषधियाँ ही नही बनतीं बल्कि मोटर और साइकिल के टायर-ट्यूब भी बनाये जाते है।

अत. जिधर भी दृष्टि डालिए उधर ही आपको दिखलाई देगा कि हम पेड़-पौधो के कितनी ऋणी हैं। यदि ससार मे पेड़-पौधे न हो तो हमारा काम चल ही नही सकता हम उनकी उपयोगिता के सम्बन्ध मे जो कुछ भी कहे वह थोड़ा और अधूरा ही रहेगा। अतएव इतना ही कहना पर्याप्त है कि हम प्राणियो की दुनिया पौधों की दुनिया पर अवलम्बित है। वे ही हमारे जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त काम मे आते है। उनके बिना हम एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकते।

है जो अवलम्बी की शाखाओं की दरारों मे व पत्तियो पर पाई जाती है जैसे ओस व मेह का पानी, एकत्रित धूलि में वर्तमान लवणादि इत्यादि, जिनको वह अपनी जडो द्वारा शोषण करते है, पर यह जडे आश्रयदाता के शरीर को नहीं भेदती है। असली आरोही पौधे पेडो की शाखा तथा पत्तियो के सिवाय और किसी अन्य स्थान पर नही पाए जाते है। ऐसा कहना अनुचित न होगा कि ऐसे पौधे दूसरो से छाया, जल व कुछ द्रव्यो की याचना करके अपना निर्वाह करते है। ऐसे पौधे बहुधा भूमध्य रेखा के निकटवर्त्ती जगलो तथा पहाडी प्रदेशो मे जहाँ बरसात अधिक होती है पाए जाते है। ऐसी जगह के पेडो की डाले वस्तुतः आरोही पौधो के समूह से आच्छादित रहती है। पीपल व बरगद के पौधे अकसर प्रारम्भ मे आरोही ही होते है। बाद मे धीरे धीरे बढ कर उनकी जडे पृथ्वी मे प्रवेश कर जाती हैं और ऐसा मालूम पडता है मानो वह जमीन ही से उगे हो। असली आरोही पौधो के उदाहरण औरकिड (orchid) पोथास (pothas), पर्णाङ्ग (ferns) इत्यादि है जो लका, नीलगिरि पर्वत, मसूरी, नैनीताल, दारजिलिंग इत्यादि पर्वती स्थानो तथा पश्चिमी घाटो के जगलों, आसाम व बगाल मे बहुतायत से पाए जाते हैं।

बॉदा, जो बहुधा आम के पेडों पर पाया जाता है, भी एक प्रकार का याचक पौधा कहा जा सकता है। आरोही पौधो से इसमे यह विभिन्नता है कि इसमे से एक प्रकार की जडे निकल कर आश्रयदाता के ततुओं मे प्रवेश कर जाती है और अवलम्बी के शरीर से उसकी जडो द्वारा पृथ्वी से शोषित जल तथा उसमे घुले लवणो को चूसा करती है। जीवन निर्वाह की अन्य आवश्यक खाद्य वस्तुए बॉदा स्वय निर्माण करता है, यदि बॉदा पौधो की सख्या आम के वृक्ष पर सीमा के बाहर न हो जाय तो पालक व आश्रित दोनो व्यक्ति अपना २ जीवन साधारण रूप से निबाह लेते है। पर यदि बॉदों का नम्बर अधिक हो गया तो आम को हानि होने की सम्भावना रहती है। बॉदा आशिक परान्न-

भोजी भी कहा जा सक्ता है क्योंकि वह कुछ खाद्य पदार्थों के लिए सर्वदा दूसरे पर निर्भर रहता है।

ठग पौधे

ठग लोगो का यह काम कहा जाता है कि वह अपने असामी को फंदे से गला घोट कर मार डालते है। वनस्पतियो के संसार मे लताओ में से कई इसी प्रकार के है, विशेष कर अजीर व बड जाति के वृक्ष, यह दूसरे पौधो के शरीर को अपने तनो तथा जडो मे धीरे २ ऐसा जकड लेते है जैसा किसी पाश व फंदे से। फलस्वरूप आवेष्ठित पौधा अंत मे घुट कर मर जाता है और ठग अपना सिक्का जमा लेता है। कलकत्ते के बोटानिक गार्डन (Botanic Garden) का प्रख्यात बरगद का पेड पहले २ एक ताड़ के पेड पर आरोही की भाँति उगा था। धीरे २ अपनी प्रसारित जडो द्वारा ताड़ को उसने दबा कर मार डाला और अपना प्रभुत्व एक विस्तृत स्थान पर जमा लिया। इसी प्रकार का एक करुण नाटक लखनऊ के सिकन्दर बाग मे हुवा सन् १९२१ मे देखा गया कि बरगद के एक वृक्ष की जडो ने एक खजूर के पेड़ को ऐसा जकड रक्खा था कि उसके तने का पत्तियो वाला भाग ही केवल दिखाई देता था। कुछ सालो के बाद जडो ने उसको भी हडप लिया और अब खजूर के वृक्ष का नामोनिशान भी नहीं है। हरद्वार मे लछमन झूला के पार यात्रियों की बाट के अगल-बगल अनेको ऐसे ठगी के उदाहरण दिखाई देते है।

परान्न भोजी व डाकू पौधे

यह वह पौधे हैं जो दूसरो को लूट कर अपने अस्तित्व को कायम रखते है। ऐसे पौधे सचमुच अपने असामी की रग-रग चूस कर उसकी हस्ती मिटा देते है। वनस्पति जगत व जन्तु जगत की महामारियाँ, जैसे प्लेग, हैजा, यक्ष्मा, गेहूँ, आलू तथा अन्य फसलो के रोग, इन्ही की डाकू प्रकृति के फल-स्वरूप है। बडे से बडे वृक्षो का भी सर्वनाश ऐसे ही परान्नभोजी पौधों द्वारा

होता है। इन उदाहरणों से अन्दाजा लग सकता है कि वनस्पति जगत के ऐसे नागरिक ससार की कितनी गभीर हानि का कारण होते है।

इस श्रेणी के पौधे विभिन्न रूप और आकृति के होते है पर उन में एक समानता है—पर्णहरित (Chloro Phyll) का अभाव। पर्णहरित के ही कारण पेड पौधे सरल पदार्थों को सूर्य्य किरणों की उपस्थिति में विचित्र कीमिया द्वारा खाद्य पदार्थो में परिणत कर देते हैं जिससे उनका स्वय तथा ससार के अन्य समस्त प्राणियों का पालन पोषण होता है। उसकी अनुपस्थिति में यह विलक्षण रासायनिक क्रिया होना असम्भव है। इसीलिए जिन जीवियो में यह हरा रँग नही पाया जाता वह अपनी जीविका के लिए दूसरों पर आश्रित रहते हैं। सारा जन्तु-जगत इसी कारण और वह वनस्पतियाँ जिनमें पर्णहरित का हरा रँग नहीं पाया जाता पराधीन होते है।

जैसा ऊपर कहा गया है डाकू पौधे विभिन्न प्रकार के होते है। कुछ तो ऊँची श्रेणी वाले सपुष्पक वर्ग के सदस्य है, उनका सबसे अच्छा नमूना है अमरबेल या आकाश बेल, जैसा सब को ज्ञात है यह एक पत्ती रहित पीली बौर है जो लगभग हर प्रकार के पौधों को क्रमश बट कर सघनता मे ढक देती है। यदि आक्रमण तीक्ष्ण हुआ तो बेचारा आश्रयदाता घुट कर मर जाता है। अकसर ऐसा नही होता, पर वह इतना लूट लिया जाता है कि अशक्त हो जाता है और फूलना फलना तो अलग रहा उसके जीने के लाले पड जाते हैं। इस लता मे साधारण पौधो की भाँति जडे भी नहीं होतीं, इसीलिए रहीम ने लिखा है "अमरबेल बिन मूल की . ' पर यह केवल भ्रम है, उसकी जडे पृथ्वी मे नहीं होती वरन वह पालक पौधे के अग को वेध कर उसके तंतुओं से जा मिलती है और निरन्तर खाद्य के रसों को चूसा करती है। यदि अमरबेल पकड़ कर खींची जाय तो कहीं २ पर उसका तना पौधे से जुडा हुआ मालूम पडेगा इन्ही स्थानों पर अमरबेल की जड़ों का सम्मिलन उसके

शिकार के अग से हो सोता है। सरसो के खेत मे भी लुटेरे पेड पाए जाते है। इनमे भी पत्तियाँ नही होतीं, पर फूल बडे सुहावने नीले रँग के होते है। इन पेडो की जडे सरसो के पेड की जडो मे जा मिलती है और उनसे पृथ्वी से शोषण किए हुए रसो को चूसा करती है जिससे सरसो की उपज को बडी हानि पहुँचती है। इस बीमारी को गॅठवा कहते है, और सरसो के अतिरिक्त यह बैगन, तम्बाकू तथा आलू इत्यादि की फसलो मे भी पाई जाती है।

कंजूस पौधे

लगभग सभी प्राणियों मे भविष्य के लिए किसी न किसी रूप में सामग्री एकत्रित करने की प्रथा पाई जाती है जिसको वह प्रतिकूल परिस्थिति के सकट के समय जीवन निर्वाह के लिए काम मे लाते है। जैसे मनुष्य सपत्ति सकलित करते है, चीटी बरसात के लिए अनाज इत्यादि इकट्ठा कर लेती है इसी प्रकार और जानवर खाद्य पदार्थ जमा कर लेते है। इसके अतिरिक्त हर एक जानवर मे स्वस्थ दशा मे भोजन का कुछ न कुछ अश चरबी या वसा मे परिवर्तित होकर शरीर मे एकत्रित रहता है और उसी के सहारे भोजन न मिलने पर या हजम न होने पर जीवन और शक्ति कायम रहती है। वनस्पतियो मे तो विशेष कर खाद्य वस्तुएँ, जिनकी वस्तुतः वह आदि कारण और खान है, उनकी दैनिक आवश्यकताओं से कई गुनी मात्रा मे तैयार होती रहती है और साधारणतः भिन्न २ अवयवो तथा स्थानो मे बॅटी हुई समान रूप से एकत्रित रहती है : जैसे पत्तियाँ, शाखाएँ, जडे, फल, बीज इत्यादि, इसीलिए जानवर इनको खाते है और उनके सहारे पलते और पोषते हैं। पर वास्तव मे वह वनस्पतियो ही की आवश्यकता पूर्ति के लिए होती है जो विशेष कर फूल, फल तथा बीज पैदा होने और नई शाखाओ और पत्तियों के निकलने के समय व्यवहार मे आती है पर कुछ पौधे ऐसे है जिनके किसी अंग विशेष मे

ही यह पदार्थ एकत्रित होना आरभ हो जाते है और कई महीनो तक निरतर उनका प्रवाह उन्ही के अन्दर होना रहता है, फलस्वरूप वह अग फूल जाते है। इन अन्नकोष्टों को पौधो के बक कहना अनुचित न होगा, इन्ही को साधारण भाषा मे कद कहते है और वह पृथ्वीतल के नीचे ही निर्माणित होते और गडे रहते है। यही वह निधि है जिसको ऐसे पौधे कजूस की भॉति बचा २ कर निरन्तर गाडा करते हैं जिससे वह भूखे और लुटेरे जानवरो की दृष्टि से बची रहे। कितनी समता है मनुष्य जाति के कृपिणों और वनस्पतियो के कजूसो मे ? पर शोक से कहना पडता है कि इस गाढे परिश्रम से उपार्जित सम्पत्ति को लुटेरे और डाकू जानवर अत मे टोह लेते है और अपने काम मे लाते है। मनुष्य के आहार के तो यह आवश्यक अ ग है और अनेक जगली शाहकारी जानवरो का निर्वाह विशेष कर इन्ही पर निर्भर है। आलू, शकरकद, जिमीकन्द, अरवी व घुँइया, प्याज, गाजर मूली, सालिम मिश्री इत्यादि कजूस पौधो की एकत्रित तथा छिपाई हुई निधि के उदाहरण हैं।

मांसाहारी पौधे

मासाहारी पोधों का जिक्र पीछे भी आ चुका है। इनके सम्बन्ध की अनेक बाते सामयिकपत्रो मे निकलती रहती है जिनमे से कुछ चुनी हुई बातें यहाँ भी जाती है।

सबसे विख्यात शिकारी पौधा है 'मुस्रखली', जिसे अग्रेजी मे 'ड्रासेरा' (Dioceia) कहते ह। यह पहाडो पर और बगाल तथा आसाम की दलदली भूमि मे बहुतायत से पाया जाता है। यह पोधा छोटा होता है। इसके पत्ते जमीन के पास उसके तने के चारो ओर गोलाई मे फैले रहते है। इसकी जड ज्यादा गहरी नहीं होती और तना भी बहुत छोटा होता है। इसका हर एक पत्ता गोल और लाल रग का होता है। इस गोलाकार पत्ते के ऊपरी भाग पर

बहुत-से छोटे-छोटे पतले और चमकीले बाल होते हैं। ये बाल, जिन्हे अंग्रेजी मे 'टेन्टिकल्स' (Tenticles) कहते है, पत्ते के ही चर्म से बने होते हैं और हर एक बाल का सिरा फूला हुआ होता है। पत्ते के किनारे के बाल लम्बे होते है और भीतर के छोटे। ये सब बाल सिर्फ पत्ते के ऊपरी भाग पर ही होते है। हर बाल के ऊपरी फूले हुए भाग पर एक प्रकार का चिपचिपा तरल पदार्थ होता है। यही पदार्थ किसी छोटे जीव को फँसाने का कारण होता है। जैसे ही कोई मक्खी या अन्य कीडा, पतिगा आदि इन बालों को छूता है, वह इन पर ही चिपक जाता है। जब वह जीव इन बालों मे फँस जाता है, तब फौरन ही ये सब एक तरल पदार्थ देने लगते है और सब के सब उस प्राणी पर झुक जाते है।

भक्षण पाँच मिनट से लगाकर कई दिन तक होता रहता है। अगर जीव छोटा हुआ, तो भक्षण जल्द समाप्त हो जाता है। जीव के बडे होने पर यह लक्षण कभी-कभी महीने भर तक चलता है। इस पौधे मे एक साथ एक या दो मक्खियो या अन्य जीवो का भक्षण होता है। पुर्तगाल और दूसरे ठडे देशो मे एक और पौधा पाया जाता है, जिसके पत्ते लम्बे और मोटे होते है और जिसमे १०० से भी ज्यादा मक्खियो का एक साथ भक्षण होता है। इसे अग्रेजी मे Drosophyllum कहते है। चूकि यह पौधा इतनी मक्खियो को एक साथ पकड कर खा सकता है, इसलिए पुर्तगाल के लोग इसे अपने घरो मे रखते है और इससे मक्खियो के पकडने का काम लेते हैं। इसकी मक्खियो के पकडने की क्रिया इतनी अच्छी होती है कि इस पौधे का नाम 'मक्खी पकडनेवाला पौधा' रख दिया गया है।

एल्ड्रोवेन्डा (Aldrovenda) मे जीवो के पकडने की दूसरी रीति होती है। यह पौधा भी बगाल और आसाम मे पाया जाता है। एल्ड्रोवेन्डा के जडे नहीं होती और सारा पौधा पानी मे डूबा रहता है—सिर्फ फूल ही पानी के बाहर निकला होता है। इसके पत्ते गोल, छोटे और करीब एक तिहाई इञ्च लम्बे होते हैं। पत्तो का डठल (Petiole) पख के आकार का होता है और ऐसा प्रतीत होता है, मानो डठल ही पत्ता हो। पत्ते के ऊपरी भाग मे सुवेधी (Sensitive) बाल होते है, और जब कोई छोटा प्राणी इनको छूता है, तब पत्ता दोनो ओर से सिकुड कर प्राणी को अपने मे बन्द कर लेता है। इस पत्ते मे छोटी-छोटी कई ग्रन्थियाँ होती है, जो एक प्रकार का जहरीला रस देती ह। जब जीव इस रस मे फँस जाता है, तब वह जीवित अवस्था मे बाहर नहीं आता। जीव के मरने पर पत्ता उस जीव के पदार्थ को चूस लेता है।

चीटियाँ, कीडे, पतिगे आदि छोटे जीवो के पकड़ने के और भी कई

साधन हैं, जो अन्य पौधों में पाये जाते हैं। नेपेन्थीज (Nepenthes) एक अद्‌भुत तरीके से जीवों को पकड़ता है। यह गर्म देश में पाया जाता है। मलाया में तो यह विशेष रूप से पाया जाता है। यह एक प्रकार की लता होती है और काफी लम्बी होती है। इसके पत्ते बड़े और चौड़े होते हैं। पत्तों का ऊपरी भाग धागे के आकार का बना होता है और काफी लम्बाई तक फैला होता है। जब यह धागा, जिसे 'टेन्ड्रिल' (Tendril) कहते हैं, किसी जीव का स्पर्श करता है, तब वह नीचे की ओर झुक जाता है और सिरे पर एक छोटे घड़े की शक्ल (Pitcher) बना देता है। शेष भाग उस घड़े के मुँह पर ढक्कन बना देता है। अन्तु, घड़ा पत्ते के सिर्फ ऊपरी भाग का ही बना होता है। यह घड़ा लाल, हरे आदि रंगों से रँगा होता है। घड़े का मुँह मोटा और मजबूत होता है,

एक और पौधे के पत्ते नेपेन्थीज के पत्ते से कुछ ही भिन्न होते हैं, और वे इसी के समान जीवों के भक्षण की क्रिया को करते हैं। यह पौधा 'सेरासीनिया' (Sarracenia) है। इसके पत्ते सीधे रहते हैं और कोन की शक्ल के होते हैं पर मुँह के पास पत्ता पखे के आकार में परिणत हो जाता है। इसमें भी रस होता है, जो जीवों को मारने और भक्षण करने में मदद करता है।

एक और भी दिलचस्प पौधा 'झाझी' होता है, जिसे अंग्रेजी में 'यूट्रीक्यूलेरिया' (Utricularia) कहते हैं। यह जमीन पर और पानी में दोनों जगह होता है। पर जीवों के पकड़ने की क्रिया को वे ही पौधे, जो पानी में होते हैं, ज्यादा अच्छी तरह से बताते हैं। उसके पत्ते व और सब भाग पानी में डूबे रहते हैं, सिर्फ फूल पानी की सतह से ऊपर निकला रहता है। इसके पत्ते छोटे और कटे हुए होते हैं। इन विभाजित पत्तों की जड़ में और किनारे पर छोटे-छोटे थैले (Bladder) होते हैं, जिनकी शक्ल आड़ू के समान होती है और आकार में एक-तिहाई इंच के होते हैं। थैले के नुकीले भाग में एक छिद्र होता है। इस छिद्र में एक 'वाल्व' (Valve) लगा होता है। यह 'वाल्व' सिर्फ अन्दर की ओर ही खुलता है और एक ओर छिद्र की मोटी दीवार से लगा रहता है। 'वाल्व' के बाहरी ओर कुछ लम्बे बाल होते हैं। कुछ छोटे बाल छिद्र के चारों ओर भी पाए जाते हैं। यह थैला ही जीवों को पकड़ने का काम करता है। थैले की दीवारें मजबूत और मोटी होती हैं, ताकि पानी उनमें से छनकर न जा सके। थैले की भीतरी दीवार में बहुत-से चौकोने बाल होते हैं, जो भीतर से पानी को बाहर करते रहते हैं। जैसे ही पानी बाहर निकलता है, थैले की दीवारें सिकुड़ जाती हैं और उसमें से एक दबाव (tension) पैदा हो जाता है। कुछ देर थैला इसी स्थिति में रहता है, और जब कोई छोटा जन्तु पानी में तैरता हुआ इस थैले के पास आता है

और 'वाल्व' के बालों को छू देता है, तब 'वाल्व' खुल जाता है और पानी एकदम थैले मे घुसता है। पानी के प्रवाह के वेग मे जन्तु भी थैले मे चला जाता है। पानी के घुसते ही वाल्व फिर बन्द हो जाता है और जन्तु उस थैले मे ही बन्द हो जाता है। कुछ समय मे उस जीव को पौधा खा लेता है।

जो भी हो, मास-भक्षी पौधे अपने ढग के निराले हैं। फिर भी वनस्पति जगत् मे इनकी सख्या बहुत कम है। यह खुशी की बात है कि अभी तक कोई भी ऐसा पौधा या बेल नही देखी गई, जो आदमियो या अन्य बड़े जानवरों को पकडकर खा सके। सुप्रसिद्ध अग्रेजी-साहित्यकार श्री एच० जी० वेल्स की कहानी का पौधा, जो अपनी जडो से मालो को पकड कर उसका खून चूस लेता था, अभी तक पाया नहीं गया है। वास्तव में ऐसे पौधे की खोज और भी दिलचस्प और अद्भुत होगी।

अन्य अपहरण करने वाले पौधे

अन्य डाकू पौधे बडी निकृष्ट जाति के होते है। इस जाति के पौधों मे पुष्प नही होते इसलिए इनको अपुष्पक कहते है। पर इनमे बडी विचित्रता यह है कि इनका अग स्पष्टता से विशिष्ट अवयवो-जड, तना अथवा पत्ती मे विभक्त नही होता। यद्यपि जीवन की सभी लीलाएँ वह पूर्ण रूप से क्रिया करते है। निरसन्देह उनमे पर्ण हरित नही पाया जाता। इसी कारण वह परजीवी (parasitic) होते है और अपने प्रतिपालको को बहुत हानि पहुँचाते है यहाँ तक कि महामारी की शक्ल मे सैकडो की सख्या मे नष्ट कर देते है।

यह दो प्रकार के होते है, पहली श्रेणी मे कीटाणु (Bacteria) है। यह अति सूक्ष्म होते है और इनका शरीर एक कोष्ट (cell) का होता है। यह कितने छोटे होते हें इसका सुगमता से अनुमान करना भी सम्भव नही है पर इससे अदाजा लग जायगा कि यदि २५,००० कीटाणु पास पास

सठाकर रक्खे जायँ तो एक इच की लम्बाई के बराबर होगे, यानी एक कीटाणु १/२५००० इच के परिमाण का होता है। फलत कीटाणुओं का बिना अतिवर्धक सूक्ष्मदर्शक की सहायता के देखना असभव है। यह हमारे चारों ओर असख्य सख्या और अनेक रूप मे विद्यमान है। जल, थल, वायु मे कोई ऐसा स्थान नही जहाँ इनकी पहुँच न हो। करोड़ो और अरबो की सख्या मे हर साँस के साथ यह हमारे शरीर के अन्दर प्रवेश किया करते हैं और अनेक बीमारियों और महामारियो के आदि कारण है। आश्चर्य की बात यह है कि ऐसा होते हुए भी सर्वसाधारण लोग बहुधा स्वस्थ रहते है। इसके दो कारण है। पहला यह कि सभी कीटाणु सौभाग्यवश हानिकारक नहीं होते, वरन् बहुत से लाभदायक भी, बहुत सी प्राकृतिक क्रियाओं के सम्बन्ध मे, होते है। पर दूसरा और असली सबब यह है कि जब तक प्राणियो के बल और प्राणशक्ति मे किसी प्रकार की विकृति या न्यूनता नहीं आती तब तक इनकी उपस्थिति का कुछ भी असर उनके स्वास्थ्य पर नही होता। वस्तुतः कीटाणुओ के प्रवेश के पश्चात् कीटाणुओ और प्राणियो के तन्तुओ के बीच एक भीषण सग्राम छिड़ जाता है। स्वस्थ दशा मे शक्तिवान होने के कारण तन्तुओ की विजय होती है क्योकि शरीर के जीवाणु भक्षक आक्रामकों का नाश कर देते है, परन्तु स्वास्थ्य-व्यतिक्रम मे कीटाणुओं की प्रबलता बढ़ जाती है और साथ ही साथ रोग की प्रचडता भी, जिसके कारण रोगी निरन्तर दुर्बल और अशक्त होता जाता है। यदि कीटाणुओ की पराजय का साधन न प्राप्त हुआ तो रोगी की मृत्यु हो जाती है। पथ्य और औषधियाँ यही दो साधन है जिनके द्वारा इन अदृश्य शत्रुओ से छुटकारा रोगी पा सकता है। पर उनका प्रयोग आरम्भ से ही करना बुद्धिमानी का काम है। इससे रोग का दमन शीघ्र हो जाता है। इसीलिए अगरेजी का मसला है "Prevention is better than cure" "उपशमन की

अपेक्षा अवरोध अधिक अच्छा है।" इससे स्पष्ट है कि स्वास्थ्य-रक्षा का कितना महत्व है।

अब प्रश्न यह है कि इतनी निकृष्ट मर्यादा के जीव इतने घातक और खोटे क्यों होते है? पहली बात तो यह है कि उनका छोटापन ही उनके अनुकूल है। यदि शत्रु दिखाई न दे तो उसका प्रतिरोध ही कैसे हो सकता है? दूसरे इन कीटाणुओ मे प्रजनन बडे वेग से होता है। एक से दो कुछ ही मिनटों में हो जाते। यदि औसत आधा घटा लिया जाय तो हिसाब लगाने से मालूम पड़ेगा कि २४ घटे मे एक कीटाणु से लगभग ३००,०००,०००,०००,००० बन जायँगे, और इनका बोझ ६,००० मन से भी अधिक होगा। इसके साथ साथ यदि इस बात का भी ध्यान रक्खा जाय कि इनका भोजन प्राणियों के शरीर और तन्तुओ से प्राप्त होता है और अपने विषैले सारो द्वारा यह उनका नाश भी बराबर किया करते है, तो इन निशस्त्र निम्न-श्रेणी के जीवो की भयानकता का कुछ अनुमान हो सकता है। और उनकी करतूत तो स्पष्ट ही है। इसी के फलस्वरूप हैजा, न्यूमोनिया, यक्ष्मा, सूजाक, जमौघा जैसी बीमारियाँ और सक्रामकरोग है जिनके प्रकोप से कितनी ही बस्तियाँ उजड गईं, कितने ही पालने मे झूलते-झूलते बालको की गर्दने मरोड़ दी गईं, कितने फलते-फूलते मनुष्य-रत्न बात की बात मे उठ गए या महीनो तथा वर्षो घुलते घुलते पच-तत्त्वो मे जा मिले। इस श्रेणी के डाकू पौधे विशेष कर जानवरो पर ही आक्रमण करते है।

दूसरी श्रेणी के डाकू पौधे खुमी या छत्रक-वर्ग से सम्बन्ध रखते है। इस वर्ग के भी सभी पौधे हिंसक व हानिकारक नही होते। बहुत से लाभकारी भी होते है। अँगरेजी मे इनको Fungi कहते है। पर जो हिंसक है वह बडे नाशकारी होते है। कीटाणुओ के विरुद्ध इनका आक्रमण जानवरो पर नहीं बल्कि वनस्पतियों पर होता है। पर समता यह है कि उन्ही की तरह यह

भी रोग और महामारी पैदा करते है जिनसे पेड-पौधे कमजोर हो जाते है और उनकी उपज पर बड़ा बुरा प्रभाव पडता है। कभी-कभी तो फसलो पर इतना भीषण आघात होता है कि उनका नाम व निशान नही रह जाता। इसके कारण अकाल भी पड जाते ह और जानवरो, विशेष कर मनुष्यो, को कठिन आपत्ति का सामना करना पडता है। इसके अतिरिक्त तिजारत मे लाखो रुपए का घाटा होता है। गेहूँ, बजरा, जौ इत्यादि फसलो की बीमारियाँ, आलू की बीमारी, अखरोट की व्याधि इत्यादि इन पौधो की करतूत के कुछ उदाहरण है।

इन वनस्पतियों के अग की बनावट महीन सूत के डोरों की तरह होती हैं जो जालवत आक्रमित व्यक्ति के ततुओ तथा कोष्ठो के अदर फैल जाते है और निरतर उसके खाद्य पदाथा को चूसा करते है। नतीजा यह होता है कि बेचारा पौधा स्वय उनसे वचित रहता है अथवा उनको पर्याप्त मात्रा मे नही पाता। इसलिए वह अशक्त और रोगी की भाँति दयनीय और दुखी जीवन व्यतीत करता है या मौत के घाट जा सकता है।

जो व्यक्ति आलस्य या निष्क्रियता के कारण स्वय अपनी आवश्यकताओ की परिश्रम करके पूर्ति नहीं करते वे कितने हानिकारक, दुखदाई तथा नाशक होते है, यह लुटेरे, ठग और डाकू जानवरो और पौधो की करतूतो से स्पष्ट ही है।

वनस्पतियों की संवेदनशीलता तथा सज्ञान अथवा सचेतन पौधे

प्राय· लोग यह नही जानते या उनका ध्यान इस ओर नही आकर्षित होता कि पेड-पौधे भी सजीव, क्रियावान और सवेदनशील होते हैं। बहुत से तो शायद यही समझते हों कि यह निर्जीव पदार्थ है, पर थोडा सोचने से मालूम हो

जायगा कि इनमे भी जीव है और जन्तुओ के समान वह जन्मते, बढते, सन्तान उत्पन्न करते और अत मे मर जाते है। इसके अतिरिक्त उनका जीवन उतना ही रहस्यपूर्ण होता है जितना जानवरों को। यह भी सर्दी गर्मी, प्रकाश, आर्द्रता, शुष्कता तथा स्पर्श इत्यादि का अनुभव करते और परिस्थिति के अनुकूल बदलने की योग्यता रखते हैं। इनके भी शत्रु, मित्र, सहचारी तथा सहायक होते है और इनमे भी घोर सग्राम हुआ करता है। पर यह सब क्रियाएँ प्रायः इतनी मन्द गति से और इस प्रकार होती है कि वह साधारणतः दिखाई नही देतीं, पर इन्ही के फलस्वरूप बीज अकुरित होते, शाखाएँ तथा पत्तियाँ आकाश की ओर बढती, इसके प्रतिकूल जड़े पृथ्वी-तल मे घुस कर अधकार तथा पानी की खोज मे फैलती है, लताएँ अपने सहायको को आलिगन कर उन पर आवेष्टित होती है और सगान्नभोजी पौधे अपने प्रतिपालकों को पहचान कर उन पर आक्रमण करते और उनको लूट लेते हैं। इनमे से कुछ का वर्णन पहले किया जा चुका है, यहाँ पर कुछ ऐसे उदाहरण दिए जायँगे जिनसे यह स्पष्ट रूप से जाना जायगा कि कुछ पौधे ऐसे भी है जिनमे गति, उत्तेजना तथा सचेतनता उतनी ही प्रबल होती है और जिनकी विवेचन शक्ति उतनी ही तेज होती है जितनी जानवरो मे। इसीलिए वह सज्ञान व सचेतन कहलाते है।

सबसे प्रथम तो छुईमुई, लाजवन्ती व लज्जावती का ही उल्लेख करना उचित है, इसको कौन नही जानता? इसके नाम ही उसकी विचित्रता के द्योतक है। छूते ही वह शर्मा जाती व मूर्छित हो जाती है। किस मृदुलता और अनुरूपता से एक एक करके उसकी अनेक पत्तियाँ सकुचित हो जाती है यदि कही चोट लग जाय तो आघात की कठोरता के अनुसार कई डाले तक मूर्च्छित हो जाती है और प्रफुल्लित पौधा क्षण-मात्र मे आदोलित होकर सिकुड़ जाता है। कितनी समानता है इसमे और जानवरों के व्यवहार मे? विवश है कि

अचल है, नही तो जन्तु के सदृश शायद भग जाता। ठीक इसी प्रकार का आचरण एक उन श्रेणी के जन्तुओ का होता है जो पौधो की भाँति एक ही स्थान पर स्थापित रहते हैं।

एक और पौधा इसी प्रकार की चैतन्यता दिखलाता हैं। यद्यपि यह पर्याप्त सख्या मे लगभग हर जगह पाया जाता है पर इसको बहुत कम लोग जानते और पहचानते है। कदाचित् इसी कारण इसका नाम भी हिन्दी मे नही पाया जाता। वैज्ञानिक भाषा मे इसको Bioplytun Sensitıvum कहते है। इसका शब्दार्थ हो सकता है "चैतन्य जीवी पेड" इसका नाम भी इसके गुण का सूचक है क्योंकि लाजवन्ती की भाँति इसकी भी पत्तियाँ छूते ही गति करने लगती है और दो दो मिल कर बन्द हो जाती है। पर इसमे छुई मुई की अपेक्षा सवेदन शीलता कुछ कम होती है क्योंकि पत्तियो के सिकुडने के लिए कुछ अधिक कठोर स्पर्श व आघात की आवश्यकता होती है, मानो वह ऊँघ रहा है। Neptunia oleracea मे जो एक जलज पौधा है ऐसी ही विलक्षणता पाई जाती है। इसी प्रकार की गति और वनस्पतियो मे भी पाई जाती है।

कई मासाहारी या कीट-भक्षी पौधो मे न केवल सचेतनता वरन् सज्ञानता भी स्पष्ट रूप से पाई जाती हें। यह उन वनस्पतियो का सघ है जिनका भोजन-प्राप्ति का ढग साधारण वनस्पतियो की अपेक्षा अस्त व्यस्त होकर जन्तुओ के तुल्य हो गया है। जैसा उल्लेख हो चुका है पेड-पौधे वायु जल तथा स्थल के सरल पदार्थों से अपने तथा सारे ससार के लिये भोजन सामग्री को निर्माण करते है। इसलिए वह स्वावलबी कहे जाते है इसके विरुद्ध जन्तु जगत तथा परान्नभोजी पौधे ऐसा करने मे असमर्थ है और अपने खाद्य पदार्थो के लिए उनको दूसरे प्राणियो के परिश्रम पर निर्भर रहना पडता है। मासाहारी पौधे भी परान्नभोजी वनस्पतियो की भाति परावलबी होते है पर

केवल नाइट्रोजन यौगिको के लिए। कार्बोजो (Carbohydrates) का वह स्वय सश्लेषण करते है। दूसरी विशेषता यह है कि इन यौगिको को वह उन कीड़ो के शरीरो से जिनको वह बडी दक्षता से विस्मयजनक पाशो से फॉस लेते है प्राप्त करते है। अब उनकी सचेतनता तथा सज्ञानता के कुछ उदाहरणो का वर्णन दिया जायगा।

इनमे प्रमुख स्थान डायोनिया (Dionaea) का है जिसको अँगरेजी मे Venus Fly trap 'वीनस का मक्षिका जाल' कहते है। यह पौधे अमरीका के दलदले स्थानो मे मिलते हैं (प्रायः सभी मासाहारी पौधे ऐसे ही वास-स्थानो मे पाये जाते है) जहॉ उनके अहेर बहुतायत से रहते हैं। इनमे तना नही होता और पत्तियॉ, जिनकी लम्बी प्रायः चार इच की होती है, भूमि से चिपकी हुई वृत्ताकार फैली रहती है। इनके बीच से फूलो का पुॅज समयानुसार निकलता है जो लगभग एक फुट तक ऊॅचा होता है। पत्ती की आकृति असाधारण होती है। वह कुछ कुछ चोड़ी धज्जी की शकल की होतो है और दो खडो मे जो आपस मे एक सॅकरे स्थान द्वारा जुडे होते है विभक्त होती है, अग्रखड भो दो पाश्वो या अगल-बगल के खड़ो मे विभक्त होता है, जैसे कचनार की पत्ती, जो पत्तो की नस पर मुड़ कर कब्जे की भाति आपस मे मिल जाते है। यही पाश का काम करता है। इन पाश्वो का किनारा दॉतेदार होता है जो मिल कर परस्पर जटिलता से सलग्न हो जाते है, जैसे अॅगुलियो द्वारा दोनो हाथ की हथेलियॉ, और एक सुरक्षित बन्दीग्रह बन जाता है। इसी के अन्दर कीडे फॉसकर मार डाले जाते है, और पाचक रसो द्वारा उनके शरीर के मौलिक भजन होकर पत्ती द्वारा चूस लिए जाते है।

अब कीडे फॅसाने की आश्चर्यजनक किया सुनिए। अग्र खड के प्रत्येक पार्श्व पर तीन बाल सरीखे कॉटे पाये जाते है जिनका क्रम त्रिभुजाकार होता

है। यही पौधे की ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। इनमें से एक भी यदि स्पर्श किया जाय तो अग्रखंड के दोनों पार्श्व सहसा खटके के तुल्य एक बारगी बन्द हो जाते है। पत्ती का और कोई भाग उत्तेज्य नहीं होता।

जैसा पहले बतलाया गया है इन पौधो के भक्ष्य कीडे पर्याप्त सख्या में इनके वास स्थानो मे पाए जाते है और अपने भोजन की खोज मे इधर उधर उडा तथा घूमा करते है। यदि पत्ती पर पहुँच कर दैवात् वह छवों कॉटों मे से किसी एक को भी स्पर्श करते हैं तो पौधे का खटका तीव्रता से बन्द होकर उनको फँसा लेता है। यही नहीं, अग्रखड के दोनों भाग धीरे धीरे घनिष्टता से मिलकर बेचारे कीडे को मसल कर पीस डालते है। साथ ही साथ फदे की ऊपरी सतह पर मौजूद ग्रन्थियो से जो उसके बन्द हो जाने के बाद अन्दर हो जाती है पाचक रस निकल कर शिकार के शरीर को घुला देते हैं। इसके पश्चात् वही ग्रन्थियाँ शोषक का काम करती है और निर्मित द्रव्यों को चूस लेती है। इस प्रकार यह मासाहारी पौधा अपने भोजन का एक अश जो वह स्वय नहीं निर्माण कर सकता प्राप्त करता है। चूसने की क्रिया आठ से पन्द्रह दिन तक होती रहती है। यद्यपि शिकार करने मे यह पौधे इतने तेज होते है पर भोजन करने मे कितनी सावधानता से काम लेते है ? चूसने के बाद पत्ती का यह भाग स्वय फिर खुल जाता है। पर यदि कीडा पकडने के पश्चात् उसको खोलने का प्रयत्न किया जाय तो उसका जोरों से प्रतिरोध होता है। अत्याहार से पत्ती मर भी जाती है। क्योंकि देखा गया है कि यदि कीडा जरूरत से अधिक बडा हुआ जिसको वह पचा नहीं सकती तो पत्ती फिर खुलती ही नहीं।

यह तो हुई सचेतना की बाते, अब सजानता पर ध्यान दीजिए। यद्यपि पाश किसी भी वस्तु के स्पर्श से बन्द हो जाता है पर इसका व्यवहार भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुओं के प्रति भिन्न-भिन्न होता है। जैसे यदि स्पर्श ऐसे

पदार्थ से हो जैसे तिनका, मिट्टी या बालू का टुकडा व कण, रासायनिक द्रव्य इत्यादि तो फदा काम तो अवश्य करेगा पर या तो वह पूरा नहीं बन्द होगा अथवा बन्द होकर शीघ्र ही खुल जायगा। उसके पार्श्व भी आपस मे नही सटेंगे। पर कीडे तथा मास के टुकडे के स्पर्श के पश्चात् वह जटिलता से बन्द हो जाता है और पार्श्व बडी घनिष्टता से मिल जाते है। इसके बाद जब तक पदार्थ पच नही जाता तब तक फदा बन्द ही रहता है और जोर लगाने पर भी आसानी से नहीं खुलता। इससे स्पष्ट है कि इन पौधो मे भक्ष्य और अभक्ष्य पदार्थों की पहचान करने की बुद्धि है। इसके अतिरिक्त यह भी पाया गया है कि इन पौधो के पाचक रस और उनकी पाचन क्रिया ठीक जानवरों के सदृश होती है। वस्तुत. फदा बन्द होकर पेट बन जाता है और पाचन सम्बन्धी सब काम करता है।

अन्य मासाहारी पौधे इतने तेज नहीं होते यद्यपि कुछ को छोड कर सभी भक्ष्य अभक्ष्य पदार्थो की विवेचना कर सकते है। दूसरी समता यह है कि सभी मे पाश पत्तियो के किसी न किसी भाग से बने होते हैं। अत मे सभी पाचक रसो द्वारा अपने शिकार को पचाते है।

यह उदाहरण प्रकृति के रोचक और आश्चर्यजनक अभिनय के कुछ नमूने मात्र है।
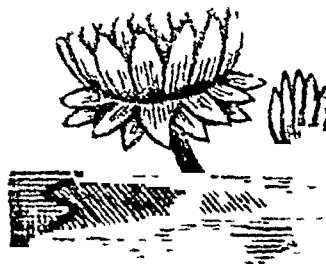
पौधों की इन्द्रियाँ

पौधे जीवधारी है, जन्तुओं की भाँति वह जन्मते, बढते तथा जीवन सम्बन्धी अनेक क्रियाओं को करते है। सफल जीवन के लिए आवश्यक है कि उनको हितकर तथा हानिकारक वस्तुओ व परिस्थितियो का समुचित और समयानुसार ज्ञान हो जाय जिससे वह लाभ उठावे। प्रत्येक पौधे मे, अतएव, ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ दोनो मौजूद रहती है, यद्यपि वह जानवरो की इन्द्रियों से बहुत भिन्न होती है, जिनके सहारे वह अपने जीवन को सफल बनाने मे समर्थ होता है। इन्ही की बदौलत तना व शाखाएँ आकाश की ओर बढती और फैलती है जहाँ उनको प्रकाश और वायु मिलते है, जडे अधकार की ओर मिट्टी फोड कर पृथ्वीतल मे धँस जाती है जहाँ से उनको जल, लवणादि इत्यादि प्राप्त होते हैं, यदि किसी कारण से पौधा झुक जाय और उसकी जडे पृथ्वी के बाहर निकल आएँ तो नई शाखाएँ व जडे फिर क्रमशः आकाश और पाताल की ओर पर्याप्त मुड कर बढने लगेगी। यह विचित्र लीला विशेष कर नवाकुरित बीज मे बड़ी सुगमता तथा स्पष्टता से दिखाई जा सकती है। यदि ऐसे अकुर को भीगी मिट्टी के ऊपर लेटा कर रख दिया जाय तो थोडे ही घटों मे उसकी शाखा ऊपर को झुक कर बढने लगेगी और जड नीचे की ओर, और यदि उसको बार बार इधर-उधर उलट कर रख दिया जाय तो शाखा और जड दोनों लहरदार हो जायँगी। इन्ही इन्द्रियो के कारण लताएँ अवलबी को पकड या उस पर आवेष्ठित होकर अशक्त होते हुए भी ऊँचे से ऊँचे स्थान पर पहुँच जाती है, अमरवेल तथा अन्य परभोजी पौधे अपनी जड़ो को दूसरे पौधो के अग मे प्रविष्ट करके उनके रसो को चूस लेते है और अत मे उनका नाश कर देते है। छुई-मुई (लाजवन्ती) की पत्तियाँ स्पर्श करते ही सिकुडने और बन्द होने लगती है और तुरन्त ही

सारा का सारा पौधा मुर्झाया सा हो जाता है, इत्यादि। प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि पेड़-पौधे प्रकाश, जल या आर्द्रता, स्पर्श, गुरुत्वाकर्षण तथा रासायनिक वस्तुओं से विशेष प्रभावित होते हैं, और जड़े, तना व शाखाएँ, पत्तियाँ और लतागत्र (tendrils) ही उनकी इन्द्रियाँ हैं। वृक्षों में जीवन और ज्ञानेन्द्रियाँ होने की खोज आचार्य जगदीशचन्द्र बोस ने विशेष रूप से की है जिसकी मुख्य-मुख्य बातें नीचे दी जाती हैं।

पौधों में स्पन्दन

आचार्य बोस ने देखा कि लोहा, मिट्टी, पत्थर आदि जड़ पदार्थों और जलचर, नभचर, आदि चेतन प्राणियों के बीच में है उद्भिज संसार। वनस्पति उगते हैं, हिलते-डुलते हैं, फलते-फूलते हैं, अतः वे पत्थर, मिट्टी आदि जड़ पदार्थों से भिन्न हैं। लेकिन हिलने-डुलने पर भी वे अचल हैं: जीवों की भाँति वे चलते-फिरते कूदते-फाँदते नहीं और न उनके अंग-प्रत्यंगों में जन्तुओं की तरह स्पन्दन ही दीख पड़ता है। आचार्य बोस ने उद्भिज संसार का अध्ययन करके पता लगाया कि चारों ओर की परिस्थिति का परिवर्तन जन्तुओं पर जो प्रभाव डालता है, वही प्रभाव वृक्षों पर भी डालता है। मान लीजिए कि यदि किसी जन्तु के शरीर में चाकू घुसेड़ दिया जाय, तो वह पीड़ा से छटपटाने लगेगा। ठीक इसी प्रकार किसी पेड़ में चाकू भोंकने से उसे भी पीड़ा और छटपटाहट होती है। हम उसे इसीलिए नहीं जान पाते कि पेड़ के भीतरी भाग में क्या हो रहा है, हम यह देखने में असमर्थ हैं।

इस अनुसन्धान में वैज्ञानिकों के लिए अनेक कठिनाइयाँ थीं, जिनमें मुख्य यह थीं :—

(१) ऐसे उपायों की कमी, जिनसे वृक्ष अपनी भीतरी बातें प्रकट करने के लिए बाध्य हों।

(२) ऐसे सूक्ष्म यन्त्रो की कमी, जो वृक्षों की भीतरी क्रियाएँ ज्ञात कर सके।

(३) जीवित प्राणियो के अंगो के—कर्मेन्द्रियो के—बाह्य आकार को जरूरत से ज्यादा महत्त्व देना, पर उनके कार्यो की उपेक्षा करना।

इन कठिनाइयो को दूर करने के लिए बोस महोदय ने पहले तो इस बात की चेष्टा की कि वृक्ष स्वय अपना जीवन-वृत्तान्त प्रकट कर सके। उन्होने वृक्षो को लगातार एक-सी शक्ति के कुछ दहलानेवाले धक्के पहुँचाये, साथ ही उनमे ऐसे यन्त्र लगा दिये, जो उनमे उत्पन्न होनेवाली उत्तेजना को अंकित कर सके। इस प्रकार यह देखा गया कि जब उन्हे कोई उत्तेजक औषधि देकर धक्का पहुँचाया जाता है, तब उनका प्रत्युत्तर (Response) बहुत स्पष्ट होता है, और जब शिथिल अवस्था मे धक्का पहुँचता है, तो प्रत्युत्तर इतना स्पष्ट नही होता।

दूसरी कठिनाई को दूर करने के लिए बोस महाशय ने कुछ ऐसे यन्त्रो का आविष्कार किया, जो सूक्ष्म-से-सूक्ष्म बातो तक को ग्रहण कर सके। खुर्दबीन सूक्ष्म वस्तु को बडा बनाकर दिखाती है। सबसे ताकतवर खुर्दबीन किसी वस्तु को उसके वास्तविक आकार से करीब ३,००० गुना से अधिक नही बढा सकती, किन्तु वृक्षो का स्पन्दन देखने मे खुर्दबीन को भी असमर्थ पाकर बोस महाशय ने 'मैगनेटिक क्रेस्कोग्राफ' नामक यन्त्र का आविष्कार किया। यह यन्त्र किसी भी हरकत को १,००,००,००० गुना से भी अधिक बढाकर दिखला सकता है। जब बोस बाबू ने अपने इस यन्त्र को वैज्ञानिको के सामने रखा, तो उन्हे उसकी इस विराट शक्ति पर विश्वास ही नही हुआ। लन्दन की रायल सोसाइटी ने लार्ड रेले, सर विलियम बैग, प्रोफेसर वेलिस प्रोफेसर डानन तथा अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिको की एक कमेटी बिठाकर इस यन्त्र की परीक्षा कराई। कमेटी ने जॉच करके

बतलाया -- "यह यन्त्र १,००,००,००० गुना बढ़ाकर वृक्षों के अवयवों की वृद्धि, तथा उत्तेजक औषधि देने पर वृक्षों में होनेवाली हरकत को एकदम ठीक-ठीक प्रकट करता है।"

इसी प्रकार डाक्टर बोस के विज्ञान-मन्दिर मे अनेक सूक्ष्म-बोध यन्त्र बनाये गये है। 'रेजोनेन्ट रेकर्डर' नामक यन्त्र एक सेकेण्ड के हज़ारवे हिस्से तक को अपने आप अंकित कर देता है। इसके द्वारा वृक्षो के तन्तुओ मे दौड़ने वाली उत्तेजना की गति नापी जा सकती है। मोटे दृष्टान्त के रूप मे यो समझिये कि मान लीजिए, आपका पैर किसी कॉटे पर पड़ा, गड़ते ही फौरन आपने पैर हटा लिया। जैसे ही आपके पैर मे कॉटा गड़ता है, वैसे ही तलुवा इस खतरे की खबर देता है। यह खबर शरीर के तन्तुओ मे दौड़ती हुई दिमाग में पहुँचती है। दिमाग फौरन ही पैर को हटने का हुक्म भेजता है, और आप पैर हटा लेते है। ये सब क्रियाऍ इतनी शीघ्रता से होती हैं कि आपको पता ही नही चल पाता। इस यन्त्र के द्वारा यह जाना जा सकता है कि पैर से दिमाग़ तक खबर जाने अथवा दिमाग से पैर तक हटने का हुक्म पहुँचने मे कितनी देर लगती है और खबर किस गति से चलती है। डाक्टर बोस इस यन्त्र को पौधो मे लगाकर देखते है, तो जान पड़ता है कि अनुभूति की यह क्रिया जैसी जन्तुओ मे होती है, वैसी ही वृक्षो मे भी होती है। इसी प्रकार 'फाइटोग्राफ' यन्त्र द्वारा पेड़ो मे रस के चढ़ने की नाप-जोख होती है। इस प्रकार के और भी अनेक यन्त्र बोस महाशय ने बनाये हैं इन यन्त्रों की विशेषता यह है कि पेड़ो मे लगा देने पर ये सब-के-सब अपनी-अपनी नाप-जोख को स्वयं ही अंकित करते रहते है। यद्यपि ये यन्त्र ससार के सबसे अधिक सूक्ष्म-बोध (sensitive) यन्त्रो मे हैं, लेकिन वे सब भारतीय वस्तुओं से, भारत में ही—बोस महोदय के विज्ञान-मन्दिर मे—निर्मित हुए है।

तीसरी कठिनाई, जिसने वृक्षों का जीवन समझने में सबसे अधिक झमेला

उत्पन्न कर रखा है, प्राणियो के वाह्य अंगों के आकार को अत्यधिक महत्व देना है। जिस समय हम कहते है कि वृक्षों मे भी जन्तुओ के समान ही जीवन है, उस समय हम फौरन ही यह पूछने लग जाते है कि यदि वृक्ष जानदार है, तो उनका मुँह कहाँ है, आँखे कैसी हैं, कान कौन-से है और हाथ-पैर किधर है। हम इस बात पर ध्यान नही देते कि इन विभिन्न अगों—इन्द्रियों—का काम क्या है, और क्या वृक्ष किसी दूसरे ढग से भी इन इन्द्रियो की जरूरत रफा कर लेते है या नही। प्रत्येक अग या इन्द्रिय समूचे शरीर की भलाई के लिए कोई कर्तव्य-विशेष किया करती है। शरीर-विज्ञान के अध्ययन मे इन इन्द्रियो के वाह्य आकार पर नहीं, बल्कि उनके कार्यों पर ध्यान देना चाहिए। मुँह का कार्य शरीर के भीतर भोजन पहुँचाना है। शरीर के भीतर पाचक-यन्त्र इस भोजन को गिल्टियो से निकले हुए रस की सहायता से घोलता है, और उसका सार ग्रहण करके निस्सार अश को मल रूप मे बाहर कर देता है। भिन्न-भिन्न जन्तुओ के पाचक-यन्त्रों का आकार जुदा होने पर भी सब का कर्तव्य एक ही होता है। हम पीछे बतला चुके है कि कुछ वृक्ष मासभक्षी होते है। 'सनड्यू' नामक एक वृक्ष होता है, जो छोटे-छोटे कीडो को पकड़कर खाया करता है। उसकी पत्तियो से एक प्रकार का तेजाबी रस निकलता है। जैसे ही कोई कीड़ा उसकी पत्ती पर बैठता है, वैसे ही वह उस रस मे फँस जाता है। जब वह छूटने की चेष्टा करता है, तब पत्तियो के अडोस-पडोस के रोये आकर उसे और भी जकड देते है। फिर वह घुलता और हजम हो जाता है। बाद में कीडे का ढाँचर, जो घुल नही सकता, गिर पडता है। इसी प्रकार मक्खी खानेवाले वृक्ष 'वीनस फ्लाई ट्रैप' के हर एक पत्ते के दो भाग होते है। जो मक्खी फँसाने के लिए पिजडे का काम करते है। जैसे ही मक्खी पत्तेपर बैठती है, वैसे ही पत्ते के दोनो भाग बन्द होकर उसे कैद कर लेते हैं—ठीक उसी तरह जैसे कोई जानवर अपना शिकार पाकर गप से मुँह बन्द कर लेता है।

बाद मे मक्खी इसी कैदखाने मे घुल-घुलाकर हजम हो जाती है, और उसका ढाँचा गिर पड़ता है। जानवरो के पेट के भीतर जो पाचक-यन्त्र होते है, वे बहुत जटिल है, उनके विपरीत इन वृक्षो के पाचक-यन्त्र बड़े सरल है; किन्तु दोनो के कार्यो मे बड़ी समता है। इन दोनो वृक्षो के पाचक-यन्त्र हमे चर्म-चक्षुओ से बाहर ही दीख पड़ते है। अन्य वृक्ष भोजन और पाचन का कार्य अपने भीतरी अवयवो से दूसरे ढग से लेते हैं, अतः उनकी यह क्रिया हमें दीख नही पड़ती।

वृक्षो और जन्तुओ के जीवन की समता को समझने के लिए हमे पहले यह समझ लेना चाहिए कि जन्तुओं के शरीर में कौन-कौन से ऐसे गुण होते है, जिनके द्वारा हम उन्हे जीवित कह सकते है। जन्तुओ के स्नायुओ मे निम्न बाते दीख पड़ती है :—

(१) संकुचन और प्रसरण (Contractibility), जिनके द्वारा उत्तेजक औषधि दी जाने पर हरकत होती है।

(२) सचालनशीलता (Conductivity)– वह शक्ति, जिसके द्वारा उत्तेजना का आवेग– अनुभूति—शरीर मे संचारित होता है। उदाहरण के लिए, यदि आप किसी जीव के एक अग मे चुपके से चुटकी नोचे, तो इस शक्ति के द्वारा दूर के अगो को उसका अनुभव हो जाता है।

(३) स्पन्दनशीलता।

(४) रक्त-सचार– जिसके द्वारा शरीर को जीवित रखनेवाला रस दौड़ता है।

ये चार प्रधान गुण है, जो प्रत्येक जीवित जन्तु मे पाये जाते है। अब देखना यह है कि ये सब बाते वृक्षो के तन्तुओं मे भी मिलती है या नही?

मोटे हिसाब से हमे वृक्षो मे दो भेद दिखाई देते है। एक तो साधारण वृक्ष और दूसरे समवेदनशील (Sensitive)। वृक्षो की बहुत बड़ी सख्या

प्रथम प्रकार की है। दूसरे प्रकार के वृक्षों मे लाजवती की – छुईमुई की— जाति के कुछ पौधे है। जैसे ही आप लाजवती की एक पत्ती को छूते है, वैसे ही समूचे वृक्ष की पत्तियाँ सिकुड जाती है। यह संकुचन-कार्य ठीक उसी प्रकार का है, जैसा जानवरो की शिराओं मे होता है। लाजवंती की जाति के पौधो को छोड कर अन्य प्रकार के अधिकाश वृक्ष इस प्रकार की समवेदना से शून्य समझे जाते है। किन्तु किसी के अग-प्रत्यंगो की सवेदनशीलता का पता केवल बाहर की यान्त्रिक क्रिया (mechanical responsive movement) से ही नही होता। उदाहरण के लिए यो समझ लीजिये कि सहसा जोर की चोट लग जाने से हम चिल्ला पड़ते है, या चीख उठते है। लेकिन गूँगे व्यक्ति के चोट लगने से वह चिल्लाता नही। इसके यह अर्थ नही होते कि गूँगे को चोट की अनुभूति नहीं होती। इसी प्रकार यह समझना भी भूल है कि जो वृक्ष लाजवती की भाँति समवेदनशील नहीं दीख पड़ते, उनके अनुभूति होती ही नहीं। बोस महोदय ने यह दिखला दिया है कि वृक्षो के अवयवो मे बिजली की उत्तेजना से ठीक उसी प्रकार की प्रतिक्रिया होती है, जैसी जन्तुओं के स्नायुओ मे। बिजली की यह पहचान बड़ी विश्वसनीय है। जीवित अवस्था मे जन्तुओ के शरीर पर इसका प्रभाव पड़ता है, किन्तु किसी जन्तु के मृत शरीर पर इसका कोई प्रभाव नही दीख पड़ता।

बोस बाबू के Infinitesimal Contraction Recorder नामक यन्त्र से यह प्रत्यक्ष दीख पड़ता है कि वृक्षो के कोषाणुओ (Cells) मे उसी प्रकार संकुचन होता है, जैसा मानव-शरीर के कोषाणुओं मे।

जन्तुओं के शरीर के विभिन्न अगो मे अनुभूति का सचालन होता है स्नायु अर्थात् ज्ञान-तन्तुओ (nerves) के द्वारा। पहले वैज्ञानिक यह समझते थे कि वृक्षो मे अनुभूति के ढग की कोई वस्तु नहीं होती। इस प्रश्न के

समाधान मे सबसे बडी कठिनाई यह थी कि इस प्रकार का कोई यन्त्र नहीं था, जो इस संचालन की गति को नाप सके। डाक्टर बोस ने अपने 'रोजेनेन्ट रेकर्डर' नामक यन्त्र का आविष्कार करके यह कठिनाई दूर कर दी। वृक्षों मे अनुभूति का संचालन (Conduction of Impluse) ठीक उसी प्रकार होता है, जैसे अन्य जीवित प्राणियो मे। किसी मनुष्य के पैर मे चुटकी नोचने से उसकी खबर दूर स्थित दिमाग़ को फौरन हो जाती है। इसी प्रकार वृक्ष के किसी एक भाग में पीडा पहुँचने से उसकी खबर दूसरे भाग को हो जाती है। डाक्टर बोस के उपर्युक्त यन्त्र से यह बात भलीभाँति सिद्ध हो जाती है। हम जानते है कि आजकल डाक्टर लोग आपरेशन करते समय, जिस अंग में आपरेशन करना होता है, उसके समीप एक प्रकार की कोकेन का इंजेकशन दे देते है। इससे वह अंग-विशेष सुन्न-सा पड जाता है—कुछ समय के लिए उसका सम्बन्ध अन्य अंगो से टूट जाता है— और आपरेशन की पीडा नहीं बोध होती। शरीर के अंगो मे इस प्रकार के सम्बन्ध-विच्छेद को शरीर-विज्ञान मे 'फिजिओलोजिकल ब्लाक' कहते है। इसी प्रकार अत्यधिक शीत से भी अंग सुन्न पड जाते है। डाक्टर बोस ने वृक्षों मे भी यही बात पाई है। अत्यधिक शीत से या क्लोरोफार्म सरीखी औषधि या विष के प्रयोग से वृक्षों मे भी अनुभूति का सचालन रुक जाता है।

जीवित और निर्जीव मे सबसे विचित्र भेद जो दीख पड़ता है, वह है नाड़ियों का स्पन्दन होना, या न होना। यद्यपि यह बात केवल जानवरों मे ही दीख पड़ती है, लेकिन डाक्टर बोस ने ऑसिलेटिंग रेकर्डर (Oscillating Recorder) नामक यन्त्र बनाकर यह सिद्ध कर दिखाया है कि वृक्षों मे भी ऐसा ही स्पन्दन होता है। प्राणियों के शरीर का तापमान बढ़ जाने से— जैसे बुखार मे— नाड़ी की गति तेज हो जाती है और तापमान घट जाने से धीमी हो जाती है। ठीक यही बात वृक्षों मे होती है।

वृक्षो के रस खीचने की क्रिया के सम्बन्ध मे भी वैज्ञानिको मे बड़ी भ्रान्ति फैली थी। कुछ कहते थे कि पत्तियो के ऊपर से भाप बनकर (transpiration उड़ने से, वे नीचे से रस खीचती है, और नीचे से जड़ो का दबाव (Pressure) रस को ऊपर की ओर को ठेलता है। किन्तु इस धारणा से सारी शकाओ का समाधान नही होता था। यूक्लिप्टस का पेड साढे चार सौ फीट ऊँचा होता है। इतनी ऊँचाई तक केवल जड़ के दबाव से रस का चढना असम्भव है। डाक्टर बोस ने यह सिद्ध कर दिया कि रस का चढना वृक्षो के जीवन की एक क्रिया है। यह देखा जाता है कि जिस समय तक रस चढता रहता है, उस समय तक वृक्ष की पत्तियाँ तनी हुई रहती है, और जब रस का चढना बन्द हो जाता है, तब वे शिथिल होकर नीचे लटक जाती है। डाक्टर बोस पत्तियो के इस उठने-बैठने को नियमित रूप से अकित करने का साधन व्यवहार करके अपना कथन सिद्ध कर दिखाते है। वे 'लूपिन' वृक्ष की ऐसी टहनी लेते है, जिसकी पत्तियाँ किसी कदर सूखने से शिथिल होकर लटक चुकी हो। फिर वे उनपर वेसलीन लगाते है, ताकि पत्ती की सतह पर से भाप न उठ सके। अब इस पत्ती से न तो भाप ही उठती है, जो रस को ऊपर से खींचे, और न उसका सम्बन्ध जड से ही है, जो रस को नीचे से ऊपर को ठेल सके। फिर भी जब वे पत्ती के डठल को उत्तेजनाजनक औषधि के घोल मे डालते है, तो पत्ती बडी तेजी से तन कर ऊपर उठ जाती है। पहले वैज्ञानिक यह समझते थे कि पत्ती के डठल मे महीन छेद होते है। दबाव के कारण पानी या रस इन्ही छेदो से ऊपर चढ जाता है, जिससे पत्तियाँ तन जाती है। यदि यह बात ठीक होती, तो किसी भी तरह के रस या घोल से पत्तियाँ तन जाती। लेकिन डाक्टर बोस ने यह दिखलाया कि यदि इन तनी हुई पत्तियो का डठल किसी जहरीले घोल मे डुबा दिया जाता है, तो पत्तियाँ फौरन ही एकदम शिथिल होकर लटक जाती है। इससे प्रकट होता है कि रस का चढना पेडो के जीवन मे प्राय. वैसा ही स्थान रखता है, जैसा जन्तुओ के शरीर मे रक्त का सचार।

वृक्षों में आत्म रक्षा की प्रवृत्ति

जिस प्रकार पौधों की अनेक क्रियाएँ है, जैसे अपने लिए भोजन बनाना, उस भोजन को अपनी वृद्धि के लिए प्रयोग करना, जमीन से अपने लिए पानी तथा निरिन्द्रिय लवणों को प्राप्त करना, जल, भोजन तथा अन्य सामग्री को अपने शरीर के विभिन्न भागो मे पहुँचाना, और अनावश्यक वस्तुओं को बाहर निकाल फेकना आदि, उसी प्रकार पौधो की यह भी एक आवश्यक क्रिया है कि वह बाहरी शत्रुओ से भी अपनी रक्षा करता रहे। इन शत्रुओं के आक्रमण से बचने के पश्चात् पौधा इस योग्य होता है कि वह हवा मे सीधा खड़ा हो सके और अपनी तरह के अन्य पौधों को जन्म देने में समर्थ हो सके।

पौधो को अनेक प्रकार से बाहरी खतरों के द्वारा हानि पहुँच सकती है। यदि पौधा उगा और किसी जीव ने उसे उखाड़ फेका, तो पृथ्वी से जल प्राप्त करने का उसका सम्बन्ध छिन्न-भिन्न हो जाता है और पौधा नष्ट हो जाता है। उखाडे जाने की घटना से बचने ही के लिए पौधों की जडे जमीन मे दूर तक पहुँच जाती हैं ताकि जिस समय पौधा उखाड़ा जाय उस समय मिट्टी के एक बडे भाग मे महान खलबली उत्पन्न हो जाये। यही कारण है कि ज्यो-ज्यों पौधा बडा होता जाता है त्यो-त्यो उसकी जडो का आकार बढता जाता है और उनमे काष्ठ की वृद्धि होने से वे मजबूत भी होती जाती है।

किन्तु पौधो के सबसे बड़े शत्रु ससार के अनगिनित कीडे-मकोडे और अन्य जीव-जन्तु तथा पशु-पक्षी होते है। इनसे बचना पौधों के लिए एक समस्या है। पौधो के पास अन्य जीव-धारियो से अपनी रक्षा करने के साधन सिवा अपनी आन्तरिक शक्ति के और कुछ नही होते। उनके जन्म लेते ही

कीड़े-मकोड़ों का आक्रमण उन पर आरम्भ हो जाता है। बीज जमीन में पड़ा नहीं कि उसको खाने वाले दीमक आदि कीड़े उसकी ओर आकर्षित होकर उसे नष्ट करने का प्रयत्न करने लगते है। यदि उनसे बच कर पौधे मे कुछ पत्तियाँ निकल आई तो अन्य प्रकार के कीड़े-मकोड़े उन पत्तियो को चट करने का प्रयत्न करने लगते है। क्योंकि यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि पौधे अधिकतर अन्य जीव-जन्तुओं का प्राकृतिक भोजन होते है। यदि पत्तियाँ साफ हो गईं तो पौधे की प्रकाश और वायु से भोजन प्राप्त करने की मशीन नष्ट हो जायेगी और पौधे का जीवन खतरे मे पड़ जावेगा।

पत्तियों के बच जाने पर पेड़ वृद्धि करता है और उसमे फूल, फल निकलना शुरू होता है। तब दूसरी तरह के कीड़े-मकोड़े और पशु-पक्षी आक्रमण आरम्भ करते है। जब इन समस्त शत्रुओं से पौधे बच जाते है, तब वे मनुष्य के काम आते है। पौधे लगाने वालो को, अपने पौधों की रक्षा के लिए, यह आवश्यक है कि उन्हे उन समस्त कीड़े-मकोड़ों का थोड़ा-सा ज्ञान हो, जो पौधों की हर अवस्था पर उन्हे नष्ट करने का प्रयत्न किया करते है। साथ ही पौधा-प्रेमियो को इस बात का भी पता होना चाहिए कि किस उपाय से पौधे को उसके शत्रुओं से बचाया जा सकता है।

कुछ पौधे ऐसे अवश्य होते है कि यदि उनका ऊपरी भाग बार-बार भी खा लिया जाये या नष्ट कर दिया जाये तो भी वे जीवित रह जाते है। यह बात घास के सम्बन्ध मे बिलकुल सत्य है। कुछ ऐसे पौधे भी होते है जिनके अस्वाद के कारण जानवर उन्हे पसन्द नही करते और वे बच जाते है। ऐसे पौधे नीम, धतूरा और मदार है। बबूल, सफेद कीकर और गुलाब आदि पौधे बड़े होने पर अपने तेज काँटो के कारण बच जाते है किन्तु, प्रारम्भिक अवस्था मे उन्हे भी चरने वाले जानवर चर जाते है।

पौधों को हानि पहुँचाने मे गरमी की ऋतु भी अपना काम करती है।

वर्षा काल में, जब कि पानी की बहुतायत होती है, जडो को खीचने के लिए पर्याप्त पानी मिल जाता है। किन्तु जब वायु शुष्क होती है और मिट्टी मे पानी कम होता है, तो उस समय जल की न्यूनता पौधों के लिए एक वास्तविक खतरा हो जाती है। अनेक छोटे-छोटे पौधे आर्द्रतारहित ऋतु मे मर जाते हैं। कुछ का ऊपरी भाग ग्रीष्म ऋतु के आरम्भ होते ही सूख जाता है। किन्तु उनका धरती के भीतर का भाग जिसमे भोजन भरा रहता है आने वाले वर्ष तक जीवित रहता है। कुछ पौधो की थोडी-सी पत्तियाँ सूख कर गिर जाती है जिससे उनकी पानी उडाने वाली सतह कम हो जाती है। कुछ पौधों के छिद्र (Stomas) थोडा-थोडा बन्द हो जाते है और इस प्रकार अधिक जल क्षीण नही होने पाता। बडे पौधे अर्थात् वृक्ष, पर्याप्त पानी एकत्रित करने के लिए अपनी जडो के जल पर निर्भर रहते है। उन्हे इसकी तनिक भी परवा नही होती कि पत्तियो ने कितना पानी खो दिया।

पौधो को हानि पहुँचाने वाले कुछ रोगोत्पादक सेन्द्रिय पदार्थ भी होते है। जीवधारियो की तरह पौधे भी रोगी हो जाते है। रोगो का मुख्य कारण कुकुरमुत्ता नामक छोटे-छोटे और सरल पौधे होते है। इनमे पर्णहरित (Chlorophyll) नही होता अतः इनका जीवन निर्वाह उस भोजन पर होता है जो बना बनाया तैयार मिलता है। अधिकतर कुकुरमुत्ते पौधो और जीव-जन्तुओ के सड़ने वाले मृत-शरीरो अथवा उत्पत्तियो का सदुपयोग करते है किन्तु रोगोत्पादक कुकुरमुत्ते जीवित पौधो से अपना भोजन प्राप्त कर लेते हैं। वे पौधो को दो प्रकार से रोगी बनाते है, या तो वे पौधो के कोषो को नष्ट कर देते है या अपने मे उत्पन्न होने वाले विषैले पदार्थो से पौधे मे रोग के कीटाणु आदि प्रविष्ट कर देते है। यदि ये कुकुरमुत्ते पौधो से अलग कर दिये जाँय तो कोई सकट न उत्पन्न होगा। इसीलिए जिन पौधो की त्वचा या छाल बडी और मोटी होती है उनमे ये रोगोत्पादक सेन्द्रिय पदार्थ प्रविष्ट नहीं हो

पाते और वृक्ष की कोई हानि नही हो पाती। यदि पौधे के शरीर पर किसी बाहरी चोट से कोई घाव हो गया है, तो उसके द्वारा ये पौधे के शरीर मे घुस जाते है और रोग उत्पन्न कर देते है। यही कारण है कि कभी-कभी पौधे की एक डाली भी काट डालने से या पौधे की छाल उखाड़ डालने से सारा पौधा नाश होने लगता है। जो कुकुरमुत्ते पौधो की रस-वाहिनी नाड़ियो के द्वारा उनके शरीर मे प्रविष्ट हो जाते है उनसे बचने का पौधो के पास कोई साधन नही होता।

पौधो के भीतरी कोष बड़े कोमल और नाजुक होते है और वे अधिक दबाव पड़ने से सहज ही नष्ट हो जाते है। इस हानि को रोकने ही के लिए पौधो की छाल कड़ी होती है और उन्हे सुरक्षा प्रदान करती है।

———

पुष्पों की उपयोगिता

फूलो के बारे मे अन्यत्र केवल सकेत मात्र दो-एक बाते कही गई है। किन्तु पुष्प वनस्पति ससार की शोभा है और उनमे से अनेक बडे उपयोगी भी होते है। अतः उनके सम्बन्ध मे यहाँ तनिक विस्तार से लिखा जाता है।

भोजन के रूप में फूल

ऊपर का शीर्षक देख कर आप को आश्चर्य न होना चाहिए। क्योकि गुलकन्द की शक्ल मे सिर्फ गुलाब के फूल ही नही खाये जाते बल्कि गोभी के फूल और कचनार की कली तथा कोहडा के फूलो की तरकारी तो हमारे देश मे खूब जोरो से खाई जाती है। गुलाब के फूल तो ठण्ढाई मे भी डाल कर पिये जाते है। जिस प्रकार गोभी के फूल की तरकारी बनती है उसी प्रकार सन के फूल, लभडे के फूल, मेड्हा या सेऊहा के फूल, केले के फूल, और धरती के फूल (गुच्छी) आदि की भी तरकारी बनती है।

'डैडेलियन' 'काउस्लिप' और 'एल्डर' के फूलों की शराब हर साल बनाई जाती है। महुआ तो शराब के लिए मशहूर ही है। पीने वाले इनका मूल्य जानते है। चाय के फूलो से एक खास और बढिया प्रकार की चाय तैयार की जाती है। लोगों ने बहुधा देखा है कि बच्चे अकसर कई प्रकार के फूलो की गूदी खाते है जैसे 'थिस्टिल' गेंदा, कोकावेली, कमल। नीम के फूलो को अगर आप तल कर खाये तो बडे स्वादिष्ट मालूम देगे और और लाभ भी करेगे। प्रत्यक्षरूप से यह आवश्यक है कि ऐसे फूल चुन कर खाये जॉय जिनसे मूल्यवान फसल की हानि न हो। उदाहरणार्थ सेब के फूलों का भोजन के रूप मे सेब की अपेक्षा बहुत ही कम मूल्य है। इसके विपरीत

यदि 'डैंडेलियन' के फूल चुन लिये जाय तो हानि करना तो दूर रहा वे लाभ ही अधिक करेंगे । 'डैंडेलियन' (पीले फूल) खाने की वस्तु है। किन्तु यह आवश्यक है कि उन्हे पकाया ऐसे प्रकार से जाय कि वे स्वादिष्ट बन जाये ।

यह भी आवश्यक है कि खाने के लिए ऐसे फल चुने जॉय कि जिनका कुछ वज़न हो, नहीं तो उनके इकट्ठा करने मे इतना कष्ट होगा कि वह उस परिणाम को पूरा न करेगा जो उस कष्ट के बराबर हो। सूरजमुखी का फूल (Sun flower) खाने के काबिल है। उसके बीजो मे एक तेल होता है जो जैतून या बादाम के तेल के बराबर होता है। इस फूल की पत्तियाँ भी खाने योग्य होती है। गुलाब के फूलो की पखड़ियो से गुलकन्द बनाकर शौकीन लोग खूब खाते है और गुलाबजल की ख़ुशबू तो हर व्यजन के स्वाद को चौगुना कर देती है। केवड़े की बाली भी भोज्य पदार्थो मे ख़ुशबू प्रदान करने का एक बढ़िया साधन है। जिस पानी मे केवडे की बाली की ख़ुशबू आती है उसके पीने मे बडा आनन्द और सन्तोप प्राप्त होता है ।

इनके अलावा और भी खुशबूदार फूल हैं जिनका उपयोग खाने की वस्तुओ को सुगंधित बनाने मे होता है। मालूम ऐसा देता है कि यद्यपि इस पृथ्वी पर रहते हुए मनुष्य को हजारों वर्ष हो गये किन्तु भोजन प्राप्त करने के अभी बहुत से जारए हैं जिनका पता नहीं लगाया गया है। और खोज होगी तो अनेक जरिए निकल आवेगे।

औषधि के रूप मे तो अनेक प्रकार के फूलो का प्रयोग होता है जैसे गुलबनफशा, धव, मदार, मुचकुन्द, हरसिगार, टेसू, बबूल, नीम, आम, सहॅजन, कचनार, गुलाब, सहदेयी, भटकटैय्या, कनैर, धतूरा, चमेली, मौलसिरी, कमल, कोकाबेली, केसर, लौंग महुआ, गुड्हर, अनार, आम, नीबू, गुलेबाबूना, अमलतास, पुनर्नवा, केवडा आदि ।

फूलों में खाद्य-मूल्य

नाम फूल	प्रोटीन (माशा प्रति छटाक)	फैट (माशा प्रति छटाक)	कार्बोहाइड्रेट (माशा प्रति छटाक)	कुल कैलोरी प्रति छटाक	चूना (रत्ती प्रति छटाक)	लोह (रत्ती प्रति छटाक)	फोक (रत्ती प्रति छटाक)
केले का फूल	·८७	·११	३·००	१६·५	·१६३	·०००६	६·३
धरती का फूल (सूखी गुच्छी)	२२·८	·६	१४·७	१५८४	·१०४	—	३५·५
गुच्छी काली	६·७२	—	३७·२	१८७·८	—	—	३५·५
गोभी का फूल	२·११	·२५	३·१७	२३·३	·१६३	·०६	—

औषधि के रूप में फूल

चरक का कथन है कि लाल कमल, नील कमल, श्वेत कमल, बड़े फूल का कमल, कोकाबेलो या कुमुद, मोहा, प्रयुङ्ग, धातकी आदि पुष्प आसव-योनि के होते हैं और इनका आसव बनता है।

निर्गुन्डी का फूल हितकर और पित्तनाशक है, मालती और मल्लिका (चमेली) के फूल तिक्त और सुगधित होने के कारण पित्तनाशक होते हैं। मौलसिरी और पाटला के फूल सुगन्धित, मधुर और हृदय होते हैं। चम्पा के फूल रक्तपित्त नाशक, कफनाशक और शीतोष्ण होते है। पलाश (ढाक) के फूल कफ-पित्त नाशक होते है। कटसौला या कुरंटक के (लाल रंग) फूल कफ-पित्त नाशक होते है। नागकेशर और केसर के पुष्प कफ, पित्त तथा विष का नाश करने वाले होते है। बवासीर मे रक्त-स्राव होने पर नागकेशर के फूलो का सेवन करने से खून शीघ्र बन्द हो जाता है।

सुश्रुत का मत है कि कचनार, सन, और सेम्हर के फूल मधुर, विपाक मे भी मधुर और रक्त-पित्तनाशक होते है। अडूसा के फूल तिक्त और विपाक मे कटु, तथा क्षय और कास को नष्ट करने वाले होते है। अगस्त के फूल भी अडूसे के फूलो ही तरह गुण रखते है किन्तु ये न बहुत ठण्डे और न बहुत गरम होते है। ये रतौधी मे बडे लाभदायक सिद्ध हुए है। मीठे सहॅजन के फूल कटु-विपाकी, वातनाशक और मल-मूत्र के प्रवर्तक होते है। लाल चन्दन के, नीम के, आक या मदार के फूल कफ और पित्त के नाशक होते है। कोरैया या कुटज (जिसके बीज को इन्द्र जौ कहते है) के फूल कफ-पित्तनाशक और कुष्ठ नाशक होते है। पद्म वा कमल पुष्प तिताई के साथ मीठे, शीतल, और कफ-पित्तनाशक होते है। कुमुद-पुष्प मीठे, पिच्छल, स्निग्ध, आनन्ददायक और और शीतल होते है। कोकाबेली मे कुमुद से न्यून गुण होते हैं।

अमलतास, नीम, मोखा (एक प्रकार का पाढल वृक्ष) काकासन के फूल कफ और पित्तहरण करने वाले होते है। मूली के फूलो का साग बहुत बढिया बनता है। उनके तोड लेने से सेगरी मे, जो बीजो के लिए होती है, कोई अन्तर नही पडता। नीम के फूल पित्त नाशक, तिक्त, कीडो को नाश करने वाले और कफ को जीतने वाले होते है। नीम के फूलो की बेसन मे मिलाकर पकौड़ियाॅ बनाई जाती है, जो खाने बहुत ही रुचिकर होती है।

नीम के फूलों के कुछ प्रयोग

१—नीम के फूलो को छाया मे सुखाकर पीस ले, उसमे बराबर का कलमी शोरा मिला ले और ऑखो मे अजन करे। इससे ऑखो की फूली, धुंध, माडा आदि मिटकर ऑखो की रोशनी बढती है।

२—नीम के फूल सुॅघाने से बिच्छू का जहर मिट जाता है।

३—नीम के फूल, फल और पत्तियाँ बराबर-बराबर लेकर शर्बत की तरह २ तोले से ६ तोले तक ४० दिन पीने से सफेद कुष्ठ अच्छा हो जाता है।

४—चैत के महीने मे नीम की पत्तियों का रस और उसकी मंजरी पीना हितकर है। इसके सेवन से वात, पित्त, कफ तथा रक्त-विकार का नाश होता है।

५—निम्वार्क—नीम के २ सेर फूल ८ सेर जल मे किसी मिट्टी या कलईदार बर्तन मे २४ घटे तक भीगने दे। इसके बाद भबके से एक सेर अर्क खींच ले। मात्रा १ तोले से ५ तोले तक। इससे अजीर्ण, ज्वर, फोडे-फुसी, अरुचि, मदाग्नि, कृमि कफ तथा रक्त-पित्त नाश होता है।

६—निम्वचूर्ण—नीम की सूखी पत्तियाँ, सींके, जड़ के निकर की भीतरी छाल, फूल, निमौलियो की गिरी, सब ५ पॉच तोले और पॉचो नमक ५ तोले। सब को अलग-अलग कूट, पीस कर कपड़े से छान ले फिर सब को तौल-तौल कर ख़ूब मिला ले। मात्रा ३ से ६ माशे तक। गरम जल के साथ सेवन करने से जीर्ण ज्वर, पेट का दर्द, पतले दस्त, मदाग्नि, अरुचि दमन, कुष्ठ, नेत्र-रोग, रक्त-विकार का नाश होता है।

७—नीम का गुलकन्द—नीम के ताजे तोड़े हुए फूल २ सेर लेकर मिट्टी की थाली मे ६ सेर ताल मिश्री के चूर्ण के साथ मिला ले और फिर एक शीशे के जार मे रखकर ऊपर ढक्कन लगा कर बन्द कर दे। एक महीने तक बराबर जार को धूप मे रखे। बस गुलकन्द तैयार हो गया। मात्रा ८ आने भर से १ तोला तक। सेवन विधि—प्रातःकाल चाट लीजिए। गुण-नाक से ख़ून गिरना, हर समय शरीर का गरम रहना, कठ सूखना, मुंह से गन्ध निकलना, मंदाग्नि, ख़ून की खराबी, बवासीर, गठिया और नेत्र-सम्बन्धी रोग आराम होते है।

पुष्पों के सम्बन्ध में अन्य बातें

औषधि के अतिरिक्त पुष्पो की सबसे बड़ी उपयोगिता तो उनका नयनाभिराम दृश्य है। सुन्दर फूलो को देखने से मन प्रसन्न होता है तथा शीतलता उत्पन्न होती है। जिस समय हम सरसो के खेत के पास से निकलते है तो हरी-हरी पत्तियों के ऊपर पीले-पीले फूलों के गुच्छों को देख कर तबीयत ऐसी खुश होती है जिसका वर्णन करना असम्भव है। इसी प्रकार अन्य पुष्पो का भी हाल है। सफेद चमेली और बेल के पौधो के समूह तथा गुलाब की क्यारिया हमारे आनन्द को बढाने मे कुछ कम नही होती। रग-बिरगे फूलों को देखने से हमारा चित्त प्रफुल्लित हो उठता है। अन्य पुष्पो के दर्शनमात्र से हमारे स्वास्थ्य की वृद्धि होती है। इसीलिए लोग बाग-बगीचो मे टहलने जाते ह और शुद्ध वायु के साथ पुष्पो के दृश्य से भी मन प्रसन्न करके स्वास्थ्य लाभ करते है। क्या केसरिया डण्डी पर सफेद पखुड़ियों से सुशोभित हरसिंगार के फूलो की चादर उसके वृक्ष के नीचे बिछी हुई देख कर आपका मन प्रसन्न नही होता ?

देवताओ को भी पुष्प श्रद्धा के अतिरिक्त शायद उनकी सुन्दरता बढाने और उनकी मूर्ति को अधिक आकर्षक बनाने ही के लिए चढाये जाते है। पुष्पों की सुन्दरता देखने ही के लिए बाग-बगीचे लगाये जाते है, जिनमे सैकड़ो माली काम करते है। गुलदस्तों और बटनफूलों तथा मालाओं की बिक्री भी उनके मनमोहक रगों ही के कारण होती है। जब हम किसी का मान और श्रद्धा करते है तो उसे पुष्प चढाते है या पुष्पो की माला पहनाते है। आशीर्वाद मे भी पुष्प भेट किये जाते है। श्रद्धाजलि भी पुष्पो की चढाई जाती है। शुभ कार्यो मे भी पुष्पो का प्रयोग होता है। क्यो ? क्योंकि उनमे आकर्षण है, वे शान्ति और सुख प्रदान करते है। पुष्प बच्चे, युवा और बूढे सब ही को प्रिय मालूम देते है। पुष्प वाले पौधो की शोभा पुष्पहीन पौधो से कहीं अधिक

अच्छी होती है। अतः पुष्पों का दर्शन मन को प्रसन्न करने वाला तथा स्वास्थ्य को बढ़ाने वाला होता है। पुष्प हमारी श्रद्धा और शुभकामनाओं को प्रदर्शित करने वाले तथा अपने प्रियपात्र की शोभा बढ़ा कर उसे अधिक प्रिय बनाने का काम करते हैं।

पुष्पों की सुगंधि भी उनके उपयोग का एक विशेष कारण है। यद्यपि सब फूल सुगंधिवाले नहीं होते, किन्तु जिनमें रूप के साथ सुगंधि भी होती है वे तो दो गुण सम्पन्न होते हैं। सुगंधि से सब का मन प्रसन्न होता है। दुर्गन्धि को कोई भी नहीं पसन्द करता। जिस समय आप किसी गुलाब बाड़ी के पास से होकर निकलते हैं तो क्या वहां की महक से आपकी तबीयत खुश नहीं होती? क्या मौलसिरी के फूलों की खुशबू आपको मस्त नहीं कर देती? केवड़ा और रजनीगन्धा तो अपनी सुवास बहुत दूर ही से फैलाते हैं। वे दूर पर जाने वालों को भी अपनी सुगन्धि का प्रसाद बांटते रहते हैं। सुगंधित फूलों को सूंघने से केवल मन की प्रसन्नता और स्वास्थ्य की वृद्धि ही नहीं होती, बल्कि कई पुष्पों के सूंघने से कुछ रोगों का नाश भी हो जाता है। यदि आपकी नाक में फुन्सियां हो गई हों, तो सुगन्धित फूलों के सूंघने से वह अच्छी हो जायगी। जब किसी को मूर्छा आ जाती है तो उसे सुन्दर सुगन्धि सुंघाने से चेतना आ जाती है।

प्रकार के अनेक फूल भी रगने के काम मे आते है और आ सकते हैं।

... फूल मधु-मक्खी के काम भी आते है। पुष्पो ही से मधु-मक्खियाँ पराग जमा करती हैं और फिर शहद बनाती है। फूलों से पराग जमा करने के लिए मधु मक्खियाँ मील-दो मील तक जाती है। कदाचित् यदि पुष्प न हों तो मधु-मक्खियों को शहद बनाने मे भी कठिनाई हो, और शहद के न होने से हमे कितनी तकलीफ हो यह एक बडा प्रश्न है। पुष्पों से आसव बनने का जिक्र पीछे आ चुका है। इससे यह सिद्ध होता है कि पुष्प पीने के काम मे भी आते हैं।

पुष्पों के सम्बन्ध में फुटकर बातें

१—यदि किसी पुष्प के ढाचे का अच्छी तरह निरीक्षण किया जाये, तो दिखाई देगा कि प्रत्येक पुष्प की पंखुडियो मे कैसी सूक्ष्म रेखाए बनी होती है। उन रेखाओ का अकन क्या ही नियमित रूप से देखने मे आता है। एक-एक पंखुडी के विचित्र सौन्दर्य को देखकर विश्वपति की कारीगरी की सराहना करनी पडती है।

२—वैज्ञानिक जाँचो के आधार पर यह निश्चय हो पाया है कि फूलों मे स्थित स्त्रीत्व के अश की रचना पुरुष अश की रचना की अपेक्षा विशेष विषम है।

३—जिस वृक्ष के जो गुण हैं उसी के समान अधिकाश मे उसके फूलों के गुण होते है।

४—पुष्प, पत्र, फल, नाल और कन्द, ये क्रम से एक दूसरे से भारी होते है।

क्या जिन्दगी ये-नौ की तस्वीर गुलशन भी।
कलियों मे लडकपन है फूलों मे जवानी है।

फूल ऐसी कतअ़ के तरशे हुए जैसी नगी,
इनमे कुछ पुखराज के हमरग और कुछ नीलमी।
यासमन के रूप के गुच्छे भी है कितने हसी,
दीदनी है कुछ शुगूफ़ो का जमाले आतशी।

ऋतुओं के अनुसार पुष्पों का प्रयोग

आयुर्वेद का मत है कि गरमी मे पीली चमेली, कुंद, निवाडी, चन्दन, बेल पुष्प धारण करना चाहिए। ये पुष्प त्रिदोष नाशक होने से सब ऋतुओं मे धारण करने के योग्य होते है।

जाडे मे केतकी, मौलसिरी, कमल, गुल्लाला और चम्पा लाभदायक होते है।

वर्षा मे बेला, मरुवा, नीलकमल, गुलाब, पाडर और चन्दन के पुष्प या माला धारण करनी चाहिए। तेल लगाने के बाद केतकी की माला पहने।

हेमन्त और शिशिर ऋतु मे गुलाब शोभा को बढाता है और उष्ण वीर्य होने से लाभदायक है।

बसत मे केतकी और ग्रीष्म मे निवाड़ी, चमेली और मालती की माला पहने। केतकी बात कफघ्न है। निवाड़ी आदि त्रिदोषघ्न होने से दाह शमन करती है।

वर्षा मे पाटला पुष्प और शरद मे चम्पा धारण करे। पाटला दो प्रकार का होता है—एक वृक्ष-पाटला और दूसरा लता-पटला। पहले का फूल लाल और दूसरे का सफेद होता है, इसे मोगरा भी कहते हैं। यह बात, कफ नाशक होने से वर्षा मे उत्तम है। चम्पा पित्त नाशक होने से शरद में लाभदायक है।

वनस्पति-विज्ञान की आधुनिक प्रवृत्तियाँ

वृक्षों का स्नान

जिस प्रकार नहा धोकर मनुष्य ताजा हो जाता है और देखने मे सुन्दर मालूम होने लगता है, उसी प्रकार मेह से स्नान करने के बाद पेड पौधे भी चमक उठते है और उनका रूप-रग निखर जाता है। पत्तियों पर पानी पडने से केवल उनकी मिट्टी ही नहीं धुल जाती किन्तु उन पर चिपके हुए छोटे-मोटे पर-जीवी कीडे भी बह जाते है। यदि वे कीडे पत्तियों पर रह जाये तो उन्हे चाट जाये। इस प्रकार पानी पडने से पत्तियों की रक्षा उन हानिकारक कीडो से होती है जो उनकी जान के ग्राहक होते है और पेड की बाढ को रोकते है। किन्तु कुछ कीडे ऐसे होते है जो पत्तियाँ और डण्ठलों मे ऐसे चिपक जाते है कि मूसलाधार पानी भी उन्हे नही हटा सकता। ऐसे कीडो को नाश करने के लिए पेडों को औषधि मिले हुए पानी से स्नान कराना पडता है। विभिन्न कीडो के लिये विभिन्न औषधियों का प्रयोग किया जाता है जो कीडों का नाश करके पत्तियों की जान बचाती है।

किन्तु पेडो के स्नान के सम्बन्ध मे इतना ही पर्याप्त नही है। "हर मोलिश" महाशय ने लिखा है कि पौधो को गरम पानी से स्नान कराने से उनकी बाढ मे तीव्रता आ जाती है। प्रयोग द्वारा यह देखा गया है कि साथ-साथ उगने वाले दो पौधे लिये गये। एक को गरम पानी से स्नान कराया गया और दूसरे को नही। जितने समय मे बिना स्नान कराये पौधे मे कलियाँ खिलने का समय आया, उतने ही समय मे गरम पानी से स्नान कराये हुए पौधे मे सारे फूल पूर्णरूप से खिल उठे। और किसी-किसी पौधे मे तो यह भी देखा गया कि स्नान कराये हुये पौधे के फूल बिना स्नान कराये हुए पौधे से काफी बडे थे। विभिन्न पौधो मे स्नान की मात्रा में अन्तर होता है। कुछ पौधों

को घंटों गरम स्नान कराना पड़ता है और कुछ का काम मिनटों में चल जाता है।

वृक्षों पर गरमी-सर्दी के प्रभाव का उत्तम उदाहरण आलू है। सारे जाड़े भर आलू आराम से सोना चाहता है। किन्तु इस लम्बी निद्रा से छुटकारा पाने का उपाय भी है। फसल तैयार होने के दो सप्ताह बाद यदि आलुओं को, जमने वाले बिन्दु से तनिक ऊपर की गर्मी पहुँचा दी जाये तो उन्हें उक्त लम्बी निद्रा की आवश्यकता न रहेगी। इसी तरह के अनुभव, लोगों ने "ईथर" से भी किये हैं। किन्तु गरम पानी की अपेक्षा "ईथर" में खर्च भी अधिक पड़ता है और पौधों की सुरक्षा भी सन्देह जनक हो जाती है। अतएव यह प्रमाणित हो गया है कि विभिन्न पौधों को गुनगुने पानी से लेकर खौलते पानी तक से स्नान कराने से उनकी वृद्धि में लाभ होता है। कुछ ऐसे पौधे भी हैं जिन्हें उक्त प्रकार का स्नान उनकी पत्तिया गिर जाने पर कराने से लाभ होता है। विज्ञान की करामात से बे-फसल भी फल-फूल तैयार किये जाते हैं।

वनस्पति-जगत में सामाजिक-विधान

दूरदर्शितापूर्ण तैयारी है। और जब कोई कठिन परिश्रम से धन उपार्जन कर अपने बाल बच्चो के लिए पढ़ने लिखने और खाने पीने का अच्छा प्रबन्ध कर देता है तो हम उसकी प्रशसा करते हैं। परन्तु ये दोनो बाते आदमी को अब सूझी है। अभी सौ वर्ष भी नही हुए जब जीवन बीमा का नाम व निशान भी नही था और आज भी यह अपने बचपन मे ही है। नही तो आज इतने अनाथ बालक मारे-मारे न फिरते।

पौधो मे दूरदर्शिता और बुद्धिमानी दोनों लक्षण आश्चर्यजनक रीति से विकसित हुए है। आज से बहुत पहले भी वे आज के से ही निर्दोष रूप मे पाये जाते थे। एक भी फूलनेवाला पौधा ऐसा नही है जो अपने बच्चो के लिए बीज के रूप मे भोज्य सामग्री न जमा कर देता हो।

मनुष्य के बनाये पौधे

पौधे प्राकृतिक उपज है और हमारे यहाँ की साधारण जनता का विश्वास है कि वे परमात्मा की अद्भुत कारीगरी के एक अग है। पर जब से विज्ञान की विशेष रूप से उन्नति हुई है और मनुष्य प्रत्येक वस्तु के वास्तविक स्वरूप और मूल कारण को जानने की चेष्टा करने लगा है तब से उसके द्वारा अनेक ऐसे कार्य होने लगे है जो पहले असम्भव समझे जाते थे। नये-नये पौधे और फलों को उत्पन्न करना भी एक इसी तरह का कार्य है।

आज से दस-बीस हजार वर्ष या इससे भी कुछ अधिक समय पहले जब मनुष्य ने कृषि-विद्या का ज्ञान प्राप्त किया था तो किसान की सदा यह अभिलाषा रही थी कि उसकी फसल खूब बढ़िया और ज़्यादा हो। इसके लिये अनुभव से उसने दो उपाय निकाले थे। एक तो जमीन को अच्छी तरह से जोतकर तथा खाद देकर उपजाऊ बनाना और दूसरे खेत की उपज में से प्रतिवर्ष सबसे बड़े तथा उत्तम बीज छाँट कर बोते जाना। कुछ समय बाद किसान को एक तीसरी

तरकीब भी मालूम हुई। निरन्तर निरीक्षण करते रहने से उसे मालूम हुआ कि खेत मे कभी-कभी गेहूँ, जौ, मक्का, आदि का एकाध पौधा ऐसा उत्पन्न हो जाता है जो दूसरे पौधों से सर्वथा भिन्न प्रकार का दिखलाई पड़ता है। ऐसी चीज कभी-कभी वर्षो बाद अकस्मात् ही दिखलाई पड़ती है और जिनकी निरीक्षण शक्ति तीव्र है वे ही उसे पहिचान पाते हैं। इस असाधारण ढग के पौधे को 'स्पोर्ट' (Sport) के नाम से पुकारा जाता है और वह अच्छा या बुरा दोनों तरह का हो सकता है। अगर वह बढ़िया किस्म का हुआ और किसान ने उसके बीजो को अलग सुरक्षित रख कर बोया तो अनाज की एक नई किस्म का प्रादुर्भाव हो जाता है। सन् १८१६ मे शेरिफ़ नाम के एक स्काटलैंडवासी किसान ने एक ऐसे गेहूँ के पौधे को देखा जिसमे ६३ बोले और २५०० दाने थे। उसने उन दानों को इकट्ठा करके बोया और उनके द्वारा 'मुगो शैल ह्वीट' नामक नई किस्म का गेहूँ का पौधा सर्वत्र प्रचलित हो सका।

ये सब प्रचीन उपाय थे जो कई हजार वर्षों से लोगों को मालूम थे। पर उन्नीसवी शताब्दी मे जब विज्ञान ने मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे प्रवेश किया तब वनस्पति-विज्ञान-ज्ञाताओ ने यह पता लगाया कि हम दो भिन्न प्रकार के पौधो का कृत्रिम रीति से सयोग करके एक नये प्रकार का पौधा उत्पन्न कर सकते हैं। इस क्षेत्र मे सब से अधिक काम अमरीका के कृषि-विज्ञान-विशारद लूथर बरबक ने किया। उसने मौजूदा पौधों की ऐसी काया-पलट की और ऐसे नये पौधे तथा फल उपजाये कि लोग उसे वनस्पतियो की जादूगर कहने लगे।

अब से लगभग ६० वर्ष पहले लूथर बरबक ने कैलीफोर्निया मे वृक्ष और फलो का व्यवसाय आरम्भ किया था। पर उसे नये-नये किस्म के पौधे और फल उत्पन्न करने का ऐसा शौक था कि वह व्यापार की तरफ बहुत कम ध्यान देकर अपना ज्यादा समय अन्वेषण-कार्य में ही लगाया करता था।

उसने [illegible], गुलाब, बेर आदि अनेक कॉटेवाले पेड़ो के कॉटे दूर कर दिये। [illegible] अनेक बीज वाले फलों को बिना बीज का उत्पन्न किया। पर इतने पर भी उसे संतोष न हुआ। उसने एक किस्म के पेड़ का पराग दूसरे प्रकार के पेड़ के रज मे सम्मिलित करके बिलकुल नये स्वरूप के पौधे तैयार किये जिनके फलो का स्वाद भी निराला था। उसने घोर दुर्गन्ध युक्त फूलो को सुगधित बना दिया और फेकने लायक जगली फलो को अत्यन्त स्वादिष्ट और उपयोगी बना कर दिखला दिया। बरबक के इन आविष्कारों ने देश भर मे धूम मचा दी और हजारो व्यक्ति उसके बाग को देखने के लिये आने लगे। साथ ही अनेक लोग उसे धूर्त या शौबदेबाज कहने लगे और कुछ धार्मिक अंध-विश्वासियों ने उसे 'ईश्वर का शत्रु' कहना भी आरम्भ किया। निर्धन हो जाने से बहुत वर्षों तक उसे अनेक कष्ट भी उठाने पड़े, पर अन्त मे उसका नाम सर्वत्र फैल गया और एक वर्ष के भीतर उसके पास ३० हजार चिट्ठियाँ वनस्पति सम्बन्धी प्रश्नों को हल करने के लिये आई। सरकार ने भी उसकी वृद्धावस्था मे ३० हजार सालाना की पेंशन उसके जीवन-निर्वाह के लिये नियत कर दी।

इसके बाद और भी अनेक वनस्पति-विज्ञान विशारद इस सम्बन्ध मे खोज-बीन करते रहे और अब इस विषय मे यहाँ तक उन्नति हो चुकी है कि वैज्ञानिक लोग भिन्न-भिन्न प्रकार की भूमि और जलवायु के लिये उनके अनुकूल नई किस्म के पौधे बराबर ढूँढ़ कर निकालते रहते है। कोई आश्चर्य नही उन्नति करते-करते एक दिन ऐसा आये जब कि ससार मे आजकल के वृक्ष और फल बहुत कम नजर आवे और मनुष्यो को अपने जीवन-निर्वाह की सामग्री वैज्ञानिकों द्वारा उपजाये कृत्रिम वृक्षो द्वारा प्राप्त होने लगे।